पृथ्वी ग्रह-एक झरोखा

पृथ्वी ग्रह-एक झरोखा

बिमान बसु

विज्ञान प्रसार

प्रकाशक :
विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग
ए-50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62
नोएडा 201 307 (उत्तर प्रदेश), भारत
(पंजीकृत कार्यालय : टेक्नोलॉजी भवन, नई दिल्ली 100 016)
दूरभाष : 0120-2404430,35
फैक्स : 91-120-2404437
ई-मेल : info@vigyanprasar.gov.in
वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.gov.in

कॉपीराइट © : विज्ञान प्रसार द्वारा 2008
अंर्तराष्ट्रीय पृथ्वी वर्ष-2008 के संदेश को जन-जन तक पहुंचाने के लिए विद्यार्थी, विज्ञान संचारक और विभिन्न संस्थाए (सरकारी और गैर-सरकारी) इस प्रकाशन की विषय-वस्तु को संदर्भ के साथ उपयोग कर सकते हैं।

(इस पुस्तक के चित्र विभिन्न स्रोतों और वेबसाइटों से लिए गए है। उन सभी का संदर्भ देना संभव नहीं हैं। हम सभी वेबसाइटों और छायाकारों, जिनके चित्र यहां उपयोग किए गए है, के प्रति आभार व्यक्त करते है।)

पृथ्वी ग्रह-एक झरोखा

लेखक : बिमान बसु
हिन्दी अनुवाद : अभय एस. डी. राजपूत
हिन्दी संपादन : बी. के. त्यागी एवं नवनीत कुमार गुप्ता
परियोजना संकल्पना एवं संयोजकः बी. के. त्यागी
मुख पृष्ठ एवं पृष्ठ संयोजन : प्रदीप कुमार
प्रकाशक प्रयवेक्षक : डा. सुबोध महंती एवं मनीष मोहन गोरे

ISBN : 81-7480-178-4

मूल्य :85 रुपए

मुद्रक : बंगाल ऑफसेट, करोल बाग, नई दिल्ली

विषय सूची

भूमिका ..... *vii*

प्राक्कथन ix

1 सूर्य से तीसरा ग्रह-पृथ्वी 1

2 पृथ्वी की पर्तें 11

3 खिसकते महाद्वीप 20

4 हवा, जल और चट्टानें 36

5 जीवन का उदय 49

6 जीवन तेरे रूप अनेक 55

7 हरियाली की चादर 63

8 मानवीय हस्तक्षेप 72

9 पृथ्वी पर जीवन की कालावधि 82

संदर्भ 86

अनुक्रमणिका 87

भूमिका

जहां तक हम जानते हैं पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन है। इस ग्रह पर जानवर, पौधे तथा सूक्ष्म जीव जीवन के अनेक रूपों के साथ नाजुक संतुलन बनाते हैं, जिन्हें हम जैव विविधता कहते हैं। हर प्रजाति अपने अस्तित्व के लिए अन्य प्रजाति पर निर्भर रहती है। निश्चित तौर पर, जब हम पृथ्वी पर जीवन की बात करते हैं तो हम मानव प्रजाति की बात भी करते हैं। यदि हम अपने पर्यावरण को समझना और उसे संरक्षित रखना चाहते हैं तो हमें प्रजातियों की एक-दूसरे पर निर्भरता तथा जीवित प्राणियों के लिए हवा, पानी और मिट्टी जैसे प्राकृतिक संसाधनों के महत्व को समझना होगा।

इस धरती पर जीवन को विकसित होने तथा बदलते परिवेश के साथ अनुकूलित होने में लाखों-करोड़ों वर्ष लग गए। केवल वे प्रजातियां ही बच पाईं जो बदलते परिवेश के साथ अनुकूलित हो पाईं। हो सकता है कि यह परिवर्तन भूकंप, ज्वालामुखियों के फटने, चक्रवात इत्यादि प्राकृतिक कारणों के चलते पैदा हुआ हो। लेकिन, पर्यावरण में यह परिवर्तन उन प्रजातियों द्वारा भी लाया जाता है जो विकास की सीढ़ी में काफी ऊपर हैं। वे पर्यावरण को अपनी जरूरतों और विकास के लिए नियंत्रित करने की कोशिश करती हैं। यही काम मानव प्रजाति ने हमारे इस नाजुक ग्रह के साथ किया है; और यह प्रक्रिया अब भी जारी है।

हमें विकास के लिए ऊर्जा चाहिए, जिसे परंपरागत रूप से हम लकड़ी, कोयला तथा पेट्रोलियम जैसे प्राकृतिक संसाधनों के दहन द्वारा प्राप्त करते हैं। सदियों से हम

इन संसाधनों का दहन ऊर्जा संबंधी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर रहे हैं। आज इस बारे में तो एक राय है कि जीवाश्म ईंधनों को जलाने की प्रवृत्ति तथा उसके फलस्वरूप कार्बन डाइऑक्साइड जैसी अन्य ग्रीनहाउस गैसों को वायुमंडल में छोड़ने जैसी मानव गतिविधियां ही पृथ्वी को गर्म, और अधिक गर्म बना देने के लिए काफी हद तक जिम्मेदार रही हैं। जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण का ह्रास, प्रजातियों के विलोपन की बढ़ती दर, पेयजल की घटती उपलब्धता, सागर तक पहुंचने से पहले ही नदियों के सूखने, मृदा की गुणवत्ता का ह्रास तथा उसके चलते घटती उपजाऊ जमीन, ऊर्जा के घटते स्रोत, सिर उठाते रोगों तथा तेजी से बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण की चुनौती से उत्पन्न खतरे आज हमारे ग्रह पर मंडरा रहे हैं। मानव जनसंख्या अब इतनी अधिक हो गई है कि उसके जीवन यापन के लिए आवश्यक संसाधनों की मांग उपलब्ध संसाधनों से कहीं अधिक हो रही है। इसका अर्थ यह है कि आज हम चादर से अधिक पैर पसार रहे हैं। हम पृथ्वी के संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक मात्रा से अधिक प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रहे हैं।

इस दिशा में विश्व का ध्यान आकर्षित करने और यह बताने के लिए कि पर्यावरण वह है जहां हम रहते हैं और विकास को एक नए परिप्रेक्ष्य में देखने व समझने की कोशिश करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2008 को 'पृथ्वी ग्रह वर्ष' के रूप में मनाने की घोषणा की है। यह आशा की जाती है कि हम सभी के सहयोग से इस ग्रह पर जीवन और जैव विविधता बनी रहेगी। इसी उद्देश्य को लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कार्यक्रम व गतिविधियों का आयोजन किया जा रहा है। इसका एक महत्वपूर्ण उद्देश्य उपस्थित चुनौतियों के बारे में जनमानस में जागरूकता लाने तथा इस ग्रह को भावी खतरों से बचाने के लिए संभावित उपायों को ढूढ़ने में मदद करना है। इसी उद्देश्य को लेकर विज्ञान प्रसार ने गतिविधियों पर आधारित कार्यक्रम 'पृथ्वी ग्रह' आरंभ किया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 'पृथ्वी ग्रह' विषय से संबंधित विविध सॉफ्टवेयरों का विकास, स्कूलों/कॉलेजों के विद्यार्थियों तथा आम जनता में जागरूकता के लिए रेडियो एवं टेलीविजन कार्यक्रम तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी एजेंसियों/संस्थाओं के सहयोग से संसाधन व्यक्तियों का प्रशिक्षण आदि शामिल है।

हम यह आशा करते हैं कि 'पृथ्वी ग्रह' से संबंधित प्रकाशनों की शृंखला का विज्ञान संचारकों, विज्ञान क्लबों, संसाधन व्यक्तियों और व्यक्तिगत स्तर पर स्वागत किया जाएगा एवं उनसे प्रेरित होकर इस नाजुक निवास स्थल यानी पृथ्वी ग्रह को बचाने के लिए कार्य आरम्भ किए जाएंगे।

विनय बी. काम्बले
निदेशक, विज्ञान प्रसार
नई दिल्ली

प्राक्कथन

सौरमंडल के समस्त ग्रहों में हमारी पृथ्वी अद्वितीय है। पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ज्ञात ग्रह है जहां एक-कोशीय जीव से लेकर मानव जैसे जटिल जीवों के स्वरूप में जीवन विभिन्न रूपों में विद्यमान है। मानव के लिए पृथ्वी का अस्तित्व में आना हमेशा से रहस्य बना रहा है। आधुनिक मान्य सिद्धांत के अनुसार, करीब 4.6 से 5 अरब वर्ष पहले, हमारे सौर मंडल की रचना गैस और धूल के घूमते बादलों के रूप में हुई। सौर मंडल का आरंभिक द्रव्यमान सूर्य के वर्तमान द्रव्यमान की तुलना में करीब 10 से 20 प्रतिशत अधिक था। गुरुत्व बल के कारण इन आरंभिक बादलों में उपस्थित अणुओं के पास-पास आने के कारण इन बादलों का घनत्व अधिक हो गया। तब ये घूमते चपटे बादल मध्य भाग से उभरने लगे जिससे सूर्य का जन्म हुआ। समय बीतने पर सूर्य के आसपास, चकती के पदार्थ धूल जैसे ठोस पदार्थों में बदलने लगे थे, जो कि आकार में वृद्धि करते हुए ग्रहों के रूप में अस्तित्व में आए।

पृथ्वी की रचना के बाद से ही, लगभग 4.5 अरब वर्ष पहले से, अनेक महापरिवर्तन होते रहे हैं, जिनके कारण पृथ्वी वर्तमान स्वरूप में पहुंची है। आज हमें दिखाई देने वाले महाद्वीप सदैव ऐसे नहीं रहे हैं, वे लाखों-करोड़ों वर्षों से गति करते रहे हैं। पृथ्वी के अंदर चलने वाली प्रचंड गतिविधियां, हमें कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे बहुमूल्य संसाधन भी उपलब्ध कराती हैं।

करीब 3.5 अरब वर्ष पूर्व पृथ्वी पर जीवाणु जैसे आरंभिक जीव प्रकट हुए। नीला-शैवाल या सायनोबैक्टीरिया पहला प्रकाश संश्लेषणी जीव था जिसने

वायुमंडल को ऑक्सीजन से भरना आरंभ किया। नीले-हरे शैवाल द्वारा जीवन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की उपस्थिति ने जीवन के लिए ज़रूरी परिस्थितियों के निर्माण में सहयोग करते हुए करीब 12,000 वर्ष पूर्व आरंभिक मानव के उद्‌भव को संभव बनाया।

इस पुस्तक में पृथ्वी की कई युगों की विकास यात्रा से लेकर, पृथ्वी के जैव मंडल व प्राकृतिक संसधानों पर मानवीय प्रभाव एवं पृथ्वी की पारिस्थितिकी के ह्रास पर रोक लगाते हुए प्राकृतिक व मानवीय ज्ञान के सकारात्मक उपयोग पर दृष्टि डाली गई है।

मैं डा. विनय.बी. काम्बले व श्री बी.के.त्यागी के प्रति आभार प्रकट करना चाहूंगा जिन्होंने मुझे इस पुस्तक को लिखने का अवसर प्रदान किया। मैं इस पुस्तक की सुंदर पृष्ठ सज्जा के लिए श्री प्रदीप कुमार का भी आभारी हूं।

बिमान बसु

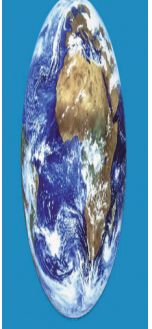

1

सूर्य से तीसरा ग्रह-पृथ्वी

सौरमंडल के सभी ग्रहों में हमारी पृथ्वी अद्वितीय है। पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ज्ञात ग्रह है जो सामान्य एक-कोशीय जीव से लेकर मानव जैसे जटिल जीवों को आश्रय दिए हुए है। जीवन के विविध रूप इस ग्रह को विशिष्टता प्रदान करते है। अब तक सौरमंडल के सभी ग्रहों का अन्तरिक्षयानों द्वारा अवलोकन करने पर यह बात साफ हो गई है कि पृथ्वी के अलावा कहीं भी जल द्रव्य अवस्था में उपलब्ध नहीं है। जल की द्रव्य अवस्था जीवन के लिए अतिआवश्यक है। अन्तरिक्षयानों द्वारा अन्य ग्रहों के अवलोकन से पृथ्वी के अन्यत्र कहीं भी ऐसी प्राकृतिक सुन्दरता देखने को नहीं मिलती है। हालांकि अन्य ग्रहों पर पर्वतों और ज्वालामुखियों की उपस्थिति है लेकिन वे वहां पर पृथ्वी जैसा आनन्द और भय का माहौल उत्पन्न नहीं कर पाते हैं। यह बात महत्वपूर्ण है कि किन अन्य कारणों ने हमारे ग्रह को अन्य ग्रहों से इतना अलग बनाया है?

पृथ्वी के अलावा किसी भी अन्य ग्रह पर जीवन के लिए उपयुक्त आधारभूत कारणों में से कोई भी एक संयोजनशील कारक उपस्थित नहीं है। हमारा ग्रह सूर्य से उचित दूरी पर स्थित है। पृथ्वी सूर्य से न ज्यादा पास है और न ही ज्यादा दूर। यदि पृथ्वी सूर्य से थोड़ा पास होती तब यहां का वातावरण जीवन के लिए बहुत गर्म होता। दूसरी तरफ यदि पृथ्वी अपनी वर्तमान स्थिति से कुछ दूर स्थित होती तो यह बहुत ठंडी होती। सूर्य से पृथ्वी की दूरी एक महत्वपूर्ण घटक है, जो पृथ्वी की सतह को आकार देने वाली अनेक भू-क्रियाओं जैसे क्षरण, स्थानांतरण और अवसाद के लिए

भी आवश्यक है। यदि पृथ्वी अपनी वर्तमान स्थिति की तुलना में सूर्य के समीप होती तो यहां उपस्थित पानी वाष्प में परिवर्तित हो जाता और यदि सूर्य से दूर होती तो पानी बर्फ में परिवर्तित हो जाता।

सूर्य से पृथ्वी की औसत दूरी 15 करोड़ किलोमीटर है, किंतु पृथ्वी जनवरी (जब उत्तरी गोलार्द्ध में ठंड का मौसम होता है) महीने में सूर्य के सर्वाधिक पास होती है।

पृथ्वी एकमात्र ग्रह है जहां जल द्रव्य अवस्था में मिलता है। (अन्तरिक्ष से पृथ्वी का दृश्य)

इसके विपरीत जुलाई महीने में पृथ्वी जनवरी माह की तुलना में सूर्य से करीब पचास लाख किलोमीटर दूर स्थित होती है। इसका कारण पृथ्वी की कक्षा का पूर्णतः वृत्तीय न होकर अण्डाकार होना है। एक घंटें में पृथ्वी अपनी कक्षा में 1,07,000 किलोमीटर या एक सेकंड में 30 किलोमीटर की दूरी तय करती है। सूर्य का एक पूरा चक्कर लगाने में पृथ्वी को 365 दिन 6 घंटे 9 मिनट और 9.54 सेकंड का समय लगता है।

पृथ्वी दिन और रात अपनी धुरी में भी चक्रण करती रहती है, किंतु यह चक्रण लम्बवत नहीं होता है। पृथ्वी का घूर्णन अक्ष अपनी कक्षा के समतल पर 23.5 डिग्री

पर झुका होता है। पृथ्वी के अपने अक्ष पर झुके होने और सूर्य की परिक्रमा करने के कारण मौसम में परिवर्तन होते हैं। पृथ्वी पर सर्दी और गर्मी के मौसम के लिए सूर्य से इसकी दूरी की बजाय इसके अपने अक्ष पर झुका होना अधिक प्रभावकारी है।

पृथ्वी पर जीवन के विकास में सूर्य से इसकी दूरी बहुत महत्वपूर्ण है। लेकिन यहां जीवन के अस्तित्व के लिए सूर्य से इसकी दूरी के अलावा वायुमंडल जैसे अन्य

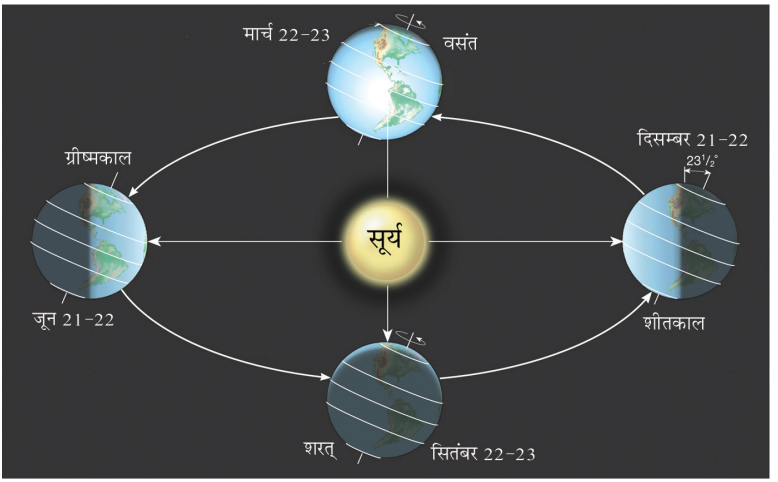

सूर्य के चारों ओर घूमने एवं धरती के अपने अक्ष पर झुके होने से यहां मौसम बदलते रहते हैं।

आवश्यक कारक भी उपलब्ध हैं। यदि इस ग्रह पर कार्बन डाइऑक्साइड और जलवाष्प को संभाले रखने वाला वायुमंडल उपस्थित न हो तो सूर्य से पर्याप्त दूरी पर विद्यमान होने पर भी यह हो सकता है कि हमारा ग्रह ठंड से जम जाए। ये गैसें हरितग्रह प्रभाव द्वारा ऊष्मा को जकड़े रखकर पृथ्वी ग्रह पर जीवों के विकास और जीविता के लिए आवश्यक तापमान को बनाए रखती हैं। आज हमारे ग्रह पर हरितग्रह प्रभाव की अधिकता के संदर्भ में "अति सदैव बुरी होती है" वाली कहावत सटिक बैठती है, क्योंकि हरितग्रह प्रभाव की अधिकता से जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न होने वाले दीर्घकालिक परिणामों से हमारी पृथ्वी सहमी हुई है। किंतु यह विषय इस किताब की विषयवस्तु में शामिल नहीं है। यहां

हम मुख्यतया पृथ्वी के बारे में बात करेंगे; जिसके अंतर्गत पृथ्वी की उत्पत्ति, संरचना और इसको आकार देने वाली भूगर्भिय प्रक्रियाओं के साथ ही जीवन की उत्पत्ति एवं विकास से संबंधित बातें शामिल होंगी।

कब हुई पृथ्वी की रचना?

पृथ्वी की उत्पत्ति के संबंध में अनेक सिद्धांत प्रचलित हैं। उनमें से एक आरंभिक सिद्धांत को सन् 1755 में जर्मन विचारक इमैन्यूल कैंट ने प्रस्तुत किया, जिसको बाद में फ्रांस के गणितज्ञ पैरी-सीमोन लाप्लास ने परिशोधित किया। यह सिद्धांत 'निहारिका परिकल्पना' यानि नेबुला हायपोथिसिस के नाम से जाना गया, इस सिद्धांत के अनुसार ग्रहों का निर्माण बादलों के गुरुत्व के प्रभाव के कारण उनमें उपस्थित पदार्थों के आपस में टकराने से हुआ। यह ग्रह अपने निर्माण के बाद से ही चपटी प्लेटों के आकार में चक्रण करने लगे थे। इन चक्कर लगाती प्लेटों से ही सूर्य और अन्य ग्रह बने।

सन् 1900 में अमेरिका के खगोलज्ञ फारेस्ट रे मोउल्टन और भूविज्ञानी थॉमस शर्वोडर चैम्बरलीन और ब्रिटेन के सर जेम्स जीन्स एवं सर हैरोल्ड जैफरी ने स्वतंत्र रूप से सूर्य का अन्य तारों के साथ बहुत पास की टक्कर पर आधारित प्रलय संबंधी सिद्धांत को ग्रहों के निर्माण की व्याख्या के रूप में विकसित किया। इस सिद्धांत के अनुसार जब सूर्य से दस गुना बड़ा तारा सूर्य के समीप से गुजरा तब सूर्य की सतह से सिगार के आकार में पदार्थों का विशाल द्रव्यमान बाहर आया। जब सूर्य से वह तारा दूर चला गया तब सौर सतह से वे पदार्थ अलग होकर लगातार सूर्य के आसपास परिक्रमा लगाते रहे और एक समय के बाद धीरे-धीरे वे घने ग्रहों में बदल गए ।

पृथ्वी के निर्माण से संबंधित सभी सिद्धांत सौरमंडल के पिण्डों और उनकी गतियों के अवलोकनों पर आधारित हैं, लेकिन इन सभी में कुछ न कुछ कमियां हैं। जैसे कुछ के अनुसार सूर्य का चक्रण हमारे सूर्य के वास्तविक चक्रण से अधिक तीव्र है। अन्य कुछ सिद्धांत ग्रहों की स्थिति और उनकी लगभग वृत्ताकार कक्षा के बारे में कुछ नहीं बता पाते हैं।

पृथ्वी की उत्पत्ति संबंधी सिद्धांतों में अगला महत्वपूर्ण विकास 20वीं सदी के मध्य में तब हुआ जब वैज्ञानिक तारों के निर्माण की प्रक्रिया और तारों की आरंभिक परिस्थितियों के अंतर्गत गैसों के व्यवहार को और अच्छी तरह समझ गए थे। यह विचार इस वास्तविकता की ओर ले गया कि तारकीय वायुमडंल से गर्म गैसें अंतरिक्ष में समा गईं; उन्होंने संघनित होकर अन्य ग्रहों का निर्माण नहीं किया। इस प्रकार सौरमंडल के निर्माण का आधारभूत विचार तारकीय समागम की स्वीकार्यता से बना था लेकिन ऐसा होना भौतिक रूप से असंभव था।

इस समय वह वैज्ञानिक जो सौरमंडल की उत्पत्ति संबंधी सिद्धांत को विकसित कर रहे थे, उनके लिए आकाशीय पिण्डों की रासायनिक संरचना का पता लगाना नए आंकड़े प्राप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हुआ। नोबेल पुरस्कार विजेता रसायनज्ञ हैरोल्ड यूरी ने क्षुद्रग्रहों के पदार्थों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि इन पिण्डों में समाहित पदार्थों का सौरमंडल के आरंभिक समय के पदार्थों में बहुत थोड़ा ही अन्तर है। वैज्ञानिकों द्वारा 50 वर्षों से अधिक समय में सूर्य और ग्रहों की रासायनिक संरचना से संबंधित प्रमाण इन पिण्डों से संबंधित हैं। वैज्ञानिक मानते हैं कि इन ग्रहों का निर्माण कैसे हुआ, इस संबंध में कुछ विशिष्ट रासायनिक संरचना सूचनाप्रद हो सकती हैं। यही जानकारी कांट और लाप्लास द्वारा सुझाए गए कुछ आरंभिक संकेतों के समान वैज्ञानिकों को कुछ आधारभूत क्रियाओं पर कार्य करने को उकसाती रही है।

गैस और धूल से भरे बादलों की उत्पत्ति का सिद्धांत

वर्तमान में सूर्य और ग्रहों की उत्पत्ति का स्वीकृत सिद्धांत पिछले चार सदियों से एकत्रित किए गए तथ्यों पर आधारित है। गैस और धूल के बादलों से सौरमंडल की उत्पत्ति वाले सिद्धांत के अनुसार आज से करीब 4.6 से 5.0 अरब वर्ष पूर्व इन बादलों का आरंभिक द्रव्यमान सूर्य के वर्तमान द्रव्यमान की तुलना में करीब 10 से 20 प्रतिशत अधिक था। ये बादल मुख्यतया हाइड्रोजन और हीलियम के अणुओं के साथ पुराने तारों के मलवे में उपस्थित भारी तत्वों की बहुत सूक्ष्म मात्रा से बने थे। जब ये बादल गुरुत्व बल के संपर्क में आए तब इनमें उपस्थित अणुओं के बहुत पास-पास आने के कारण

इन बादलों का घनत्व अधिक हो गया। तब ये घूमते चपटे बादल मध्य भाग से उभरे हुए थे। गुरुत्व बल के कारण इनमें समाहित पदार्थ चकती के केन्द्र में आ गए और स्थितिज ऊर्जा के गतिज ऊर्जा में बदलने पर ये बादल बहुत गर्म होने लगे। वैज्ञानिकों के अनुसार यह प्रक्रिया लगभग उन 5 करोड़ वर्षों तक चलती रही, जब तक की केन्द्र में नाभिकीय संलयन क्रिया द्वारा हाइड्रोजन का हीलियम में परिवर्तन होने के लिए केन्द्र का तापमान पर्याप्त नहीं हुआ। सूर्य का जन्म इसी दौरान हुआ माना जाता है।

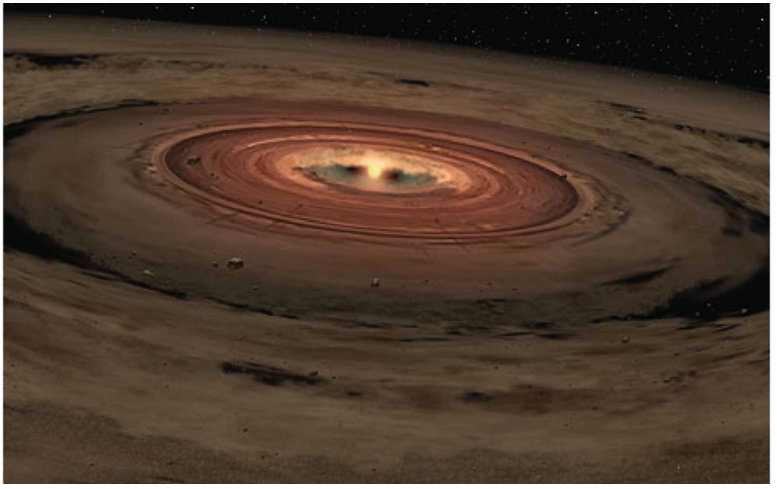

सौरमंडल का जन्म करीब 4.6 अरब वर्ष पहले हुआ था। पृथ्वी सूर्य के जन्म के करीब 10 करोड़ वर्ष बाद जन्मी।

आरंभ में सूर्य में पदार्थ गिरते रहे थे। इस प्रक्रिया के कारण चकती के केन्द्र के समीप का तापमान बहुत उच्च स्तर तक पहुंच गया था। कुछ हजार वर्षों के बाद सूर्य और शेष चकती ठंडी होने लगी। चकती का किनारा तपते सूर्य से बहुत अधिक दूरी पर स्थित होने के कारण इसके केन्द्र की अपेक्षा बहुत ठंडा था।

समय बीतने के साथ सूर्य के चारों ओर की चकती के पदार्थ धूल जैसे ठोस कणों में बदल गए। इस तरह धूल के आंरभिक कण हिमलव जैसे रोवां के समान थे। जब ये सूर्य के चारों ओर घूमते थे तब ये एक-दूसरे को टक्कर मारने के साथ रासायनिक और भौतिक बलों के कारण एक-दूसरे से जुड़े रहते थे। ये टुकड़े गुरुत्व बल

द्वारा एक-दूसरे को आकर्षित करते थे और आपस में मिलकर विशाल पिण्डों का निर्माण भी करते थे। इस प्रकार लगातार टकराहट और गुरुत्वीय प्रभाव के कारण ये पिण्ड शनैः-शनैः आज हमें दिखाई देने वाले ग्रहों में बदल गए। सूर्य के समीप चट्टानी धातुएं और अन्य भारी तत्वों वाले धूल के कणों ने सूर्य से तीसरा ग्रह यानी हमारी पृथ्वी के अलावा बुध से लेकर मंगल ग्रह तक के पार्थिव-ग्रहों का निर्माण किया। सौरमंडल के कम तापमान वाले बाहरी किनारों के समीप बर्फ के टुकड़ों को समाहित रखने वाले पानी और अमोनिया एवं मिथैन जैसी जमी हुई गैसों का निर्माण हुआ। वैज्ञानिकों के अनुसार इस प्रक्रिया को पूर्ण होने में लाखों वर्षों का समय लगा होगा।

वर्तमान धारणा के अनुसार पृथ्वी और चांद सहित आंतरिक ग्रहों का निर्माण तारकीय बादल के निपातित होने के करीब 10 करोड़ वर्षों के बाद संभव हुआ होगा। इस प्रकार पृथ्वी के निर्माण के आधुनिक सिद्धांत के अनुसार पृथ्वी का जन्म 4.5 अरब वर्ष पहले या दूसरे शब्दों में कहें तो सूर्य के जन्म के 10 करोड़ वर्ष बाद हुआ था।

आरंभिक पृथ्वी

आज हम जिस पृथ्वी को देखते हैं उसकी तुलना में आरंभिक पृथ्वी बहुत अलग थी। तब न महासागर थे, न ही वायुमंडल में ऑक्सीजन थी और उस समय पृथ्वी पर कोई जीवित प्राणी उपस्थित नहीं था। सौरमंडल के निर्माण के समय से ही पृथ्वी पर आकाश से लगातार बरसने वाली चट्टानें और अन्य पदार्थ ही उपस्थित थे। पदार्थों की इस बमबारी में पृथ्वी के रेडियोसक्रिय क्षय से उत्पन्न ताप और संकुचन के दबाव से पृथ्वी बहुत गर्म और पूर्णतः पिघली अवस्था में थी। आरंभिक समय में जहां भारी पदार्थ पृथ्वी के केन्द्र की ओर जा रहे थे तो दूसरी तरफ़ हल्के पदार्थ ऊपर सतह पर आ रहे थे। इस प्रकार पृथ्वी की विभिन्न पर्तों का निर्माण हुआ।

पृथ्वी का आरंभिक वायुमंडल सौर निहारीका की गैसों विशेषकर हाइड्रोजन और हीलियम जैसी हल्की गैसों से बना था। लेकिन सौर हवाओं और पृथ्वी की अपनी गर्मी के कारण शायद तब वायुमंडल स्थिर नहीं रह पाया था।

जब पृथ्वी ठंडी होकर सिकुड़ी तब यह गुरुत्वीय आकर्षण के कारण जलवाष्प सहित वायुमंडल को रोके रखने में समर्थ हो सकी। इसकी सतह तेजी से ठंडी हुई और अगले 10 करोड़ वर्षों के दौरान ठोस भूपटल (क्रस्ट) का निर्माण हुआ। 3.8 से 4 अरब वर्ष पहले धरती पर क्षुद्रग्रहों की भारी बमबारी हुई। इस घटना के फलस्वरूप भूपटल से वाष्प मुक्त होने के साथ ज्वालामुखियों से गैसें भी मुक्त हुईं, जिससे वायुमंडल का निर्माण हुआ। इस वायुमंडल में मुख्यतया कार्बन डाइऑक्साइड और कार्बन मोनोऑक्साइड और जलवाष्प के साथ सूक्ष्म मात्रा में मिथैन और अमोनिया गैस भी विद्यमान थी। इस

आरंभिक पृथ्वी अत्यधिक गर्म थी जिससे बारिश होने पर जल्दी ही सारा पानी वाष्प बनकर उड़ जाता था।

अवस्था में पृथ्वी पर मुक्त ऑक्सीजन वायुमंडल में शायद हाइड्रोजन या सतह के खनिजों के साथ संयुक्त रूप से थी। तापमान के कम होने पर बूंदों से बादल बने और संघनन के द्वारा बारिश हुई। कुछ स्थानों पर सतह के बहुत गर्म होने के कारण वहां बारिश होने के साथ ही जल पुनः जलवाष्प में परिवर्तित हो जाता था।

समय बीतने पर धरती की सतही चट्टानों ने पहली बारिश का अधिकतर जल अवशोषित कर लिया था। आरंभिक मूसलाधार बारिश लगातार होती रही और बहुत

विशाल क्षेत्र में संग्रहित जल ने पहले सागर का आकार लिया। कुछ वैज्ञानिको के अनुसार इस घटना के दौरान धूमकेतुओं या पुच्छल तारों ने भी पृथ्वी को प्रभावित किया होगा। करोड़ों वर्षों के दौरान पृथ्वी की सतह पर लगभग 6 मीटर ऊंचाई तक पानी भरा गया था। ये घटनाएं करीब 3.8 अरब वर्ष पहले घटित हुई थीं।

पृथ्वी के आरंभिक कुछ करोड़ वर्षों तक धूमकेतुओं के प्रभाव से धरती की सतह पर 6 मीटर तक पर्याप्त पानी जमा होने से आरंभिक सागरों का निर्माण हुआ।

लेकिन उस समय मुक्त ऑक्सीजन और पराबैंगनी विकिरणों के विरूद्ध ढाल की भाँति कार्य करने वाली ओजोन पर्त की अनुपस्थिति में पृथ्वी पर जीवन के लिए उचित माहौल नहीं बन पाया था।

गतिशील ग्रह

करीब 4.5 अरब वर्ष पहले से अर्थात जन्म से ही पृथ्वी एक जैसी नहीं रही है। इसने अनेक बार अपनी संरचना में परिवर्तनों को सहन किया है, तब जाकर पृथ्वी अपने वर्तमान आकार में पहुंची है। आज हमें दिखाई देने वाले महाद्वीप सदैव उपस्थित नहीं थे, ये तो करोड़ों वर्षों से लगातार गति करते रहे हैं। विश्व की सबसे बड़ी पर्वत श्रृंखला हिमालय लगभग 5 करोड़ वर्ष पूर्व सागर से ऊपर उठी है। पृथ्वी पर ज्वालामुखीय गतिविधियां, भूकंप, हवाएं और ज्वारीय लहरें लगातार सक्रिय रहती हैं जो पृथ्वी की सतह के आकार को बदलती रहती हैं।

पृथ्वी के अंदर चलने वाली प्रचंड घटनाएं व गतिविधियां हमें कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे बहुमूल्य संसाधन भी उपलब्ध कराती हैं। भूगर्भिय प्रक्रियाओं से निर्मित चट्टानें हमारी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। चट्टानें हमें खनिज संसाधन, भवन निर्माण सामग्री, मिट्टी के बर्तनों एवं औद्योगिक क्रिया-कलापों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराती हैं। बहुमूल्य पत्थर और उच्च तकनीक युक्त अनुप्रयोगों के लिए आवश्यक अनेक विरल तत्वों को भी चट्टानों से निकाला जाता है।

वायुमंडल की गुत्थी

पृथ्वी की एक अद्वितीय विशेषता यहां जीवन के लिए आवश्यक वायुमंडल का होना है। पृथ्वी के वर्तमान वायुमंडल में अधिकतर जीवों के लिए आवश्यक ऑक्सीजन गैस का होना इसे महत्वपूर्ण बनाता है। सौरमंडल के अन्य ग्रहों के वायुमंडल में मुक्त ऑक्सीजन पर्याप्त रूप से उपस्थित नहीं है। हालांकि पृथ्वी पर भी मुक्त ऑक्सीजन सदैव उपस्थित नहीं रही है। यद्यपि यह ज्ञात है कि अरबों वर्ष पूर्व पृथ्वी के निर्माण के समय से ही यहां ऑक्सीजन चट्टानों में ऑक्साइड रूप में उपस्थित रही है। वायुमंडल में मुक्त ऑक्सीजन हरे पौधों के अस्तित्व में आने के बाद करीब 70 करोड़ वर्ष पूर्व आई। ऐसा माना जात है कि पौधों की उपस्थिति ने पृथ्वी की जलवायु में परिवर्तन किया और भूमि पर जीवों के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त किया। अभी तक उपलब्ध तथ्यों के आधार पर धरती पर करीब 53 करोड़ वर्ष पूर्व अचानक हरे पौधों का विकास हुआ। यह घटना 'कैम्ब्रियन विस्फोट' कहलाती है। पृथ्वी पर कपि और मानवों की उत्पत्ति बहुत बाद में हुई है।

2

पृथ्वी की पर्तें

फ्रांसीसी विज्ञान कथा लेखक जूल्स वर्न द्वारा सन् 1864 में एक प्रोफेसर के साहसिक और रोमांचकारी यात्रा वृतान्त 'ए जर्नी टु द सेन्टर ऑफ दी अर्थ' में लिखा है कि प्रोफेसर, उसका भतीजा और एक पथपदर्शक (गाईड) पृथ्वी के आंतरिक भाग में स्थित मृत या निर्वापित ज्वालामुखी में गए और दक्षिणी इटली में किसी स्थान से वापस सतह पर आए। इस कहानी के अनुसार पृथ्वी के आंतरिक भाग में कोई प्रागैतिहासिक प्राणी नहीं है और मानव वहां के ताप को सहन नहीं कर सकता है। हालांकि यह कहानी पूर्णतः गल्प पर आधारित थी, लेकिन इस कहानी ने जनमानस में पृथ्वी के आंतरिक भाग के बारे में जानने की उत्सुकता पैदा की।

अधिकतर लोगों की नजरों में पृथ्वी का चित्र एक ऐसे गोले का है जिसके ऊपरी छोर पर उत्तरी ध्रुव और तल में दक्षिणी ध्रुव स्थित है, लेकिन हमारी पृथ्वी पूर्णतः गोल नहीं है। अपने अक्ष पर चक्रण करते रहने के कारण भूमध्य रेखा पर स्थित पृथ्वी का मध्य भाग आंशिक रूप से उभरा हुआ है। उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव तक इसका व्यास 12,713 किलोमीटर है, जबकि भूमध्य रेखा पर इसका व्यास 12,756 किलोमीटर है। पृथ्वी के व्यास में यह अंतर बहुत छोटा है, लेकिन अंतरिक्ष से पृथ्वी का चित्र लेने पर पर स्पष्ट दिखाई देता है। पृथ्वी का उभार ध्रुवों की अपेक्षा भूमध्य रेखा पर इसकी परिधि को अधिक व्यक्त करता है। भूमध्य रेखा पर इसकी परिधि 40,075 किलोमीटर है तो वहीं ध्रुवों पर परिधि का मान भूमध्य से 67 किलोमीटर कम है।

सौरमंडल के आठ ग्रहों में आकार के हिसाब से पृथ्वी का आकार पांचवा है। सौरमंडल के सबसे विशाल ग्रह वृहस्पति का आकार पृथ्वी के आकार से करीब 11 गुना अधिक है एवं बुध ग्रह जो सौरमंडल का सबसे छोटा ग्रह है उसका आकार पृथ्वी की तुलना में एक तिहाई है।

भूमंडल

पृथ्वी का 90 प्रतिशत से अधिक हिस्सा क्रिस्टलीय सिलिकेट से निर्मित है, जो लौह, ऑक्सीजन, सिलिकॉन और मैग्नीशियम से बना है। यद्यपि हमें धरती ठोस चट्टानों की बनी लगती है, लेकिन इसके केन्द्र तक जाने पर यह ज्ञात होता है कि यह एक समान नहीं है। वास्तव में पृथ्वी प्याज की पर्तों की भाँति अनेक पर्तों या गोलों में बंटी है। प्रत्येक पर्त की अपनी विशेषताएं हैं। पृथ्वी की सबसे बाहरी पर्त भूपटल मुख्यतया एल्युमिनियम और सिलिकेट्स से बनी है। इसके बाद प्रावार (मैंटल) पर्त स्थित है जो मुख्यतया लौह और मैग्नीशियम सिलिकेटस से बनी होती है। भूपटल और

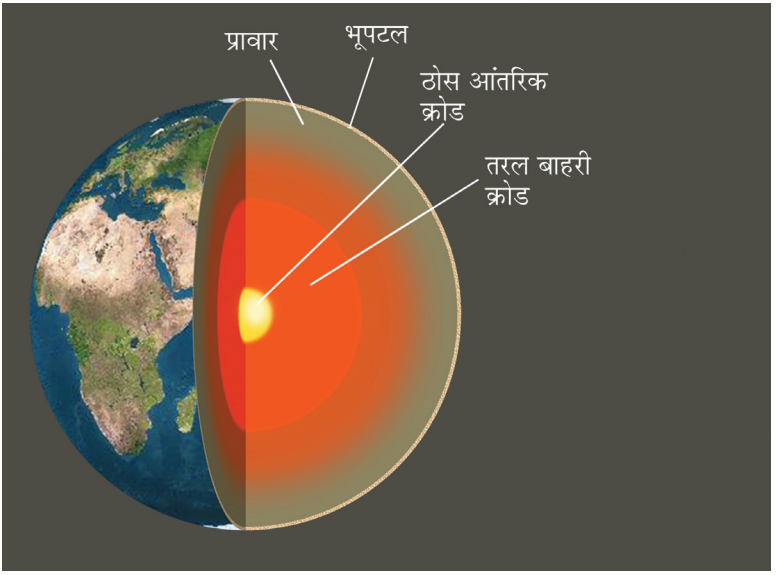

पृथ्वी प्याज की पर्तों की तरह अनेक पर्तों या गोलों से बनी हुई है।

प्रावार का ऊपरी भाग सम्मिलित रूप से स्थलमंडल (लिथोस्फियर) नाम से जाना जाता है। पृथ्वी की सबसे आंतरिक पर्त क्रोड जो ऊपरी द्रव क्रोड और ठोस आंतरिक क्रोड पर्त द्वारा विभक्त है, वह मुख्यतया लौह और निकिल से बनी होती है।

पृथ्वी की सतह का अधिकांश भाग जल और बर्फ से यानी जलमंडल से ढका है। पृथ्वी के चारों ओर उपस्थित पतली पर्त वायुमंडल कहलाती है। पृथ्वी पर जलमंडल और वायुमंडल समेत ठोस भूमि का वह हिस्सा जहां जीवन विद्यमान है, जैवमंडल कहलाता है।

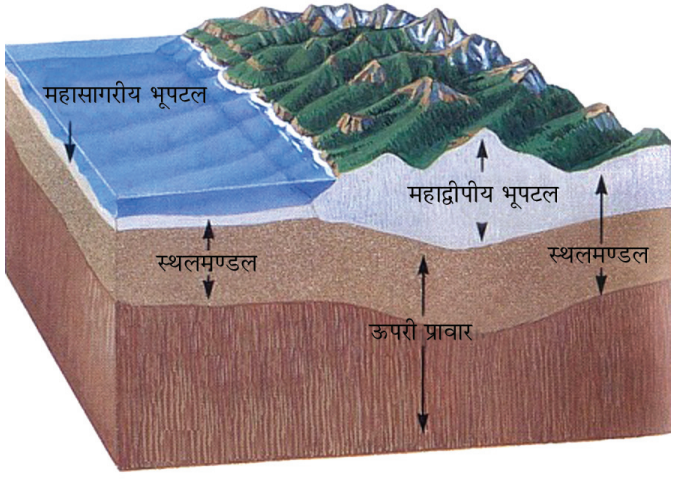

भूपटल और प्रावार का ऊपरी हिस्सा दोनों सम्मिलित रूप से स्थलमंडल के नाम से जाने जाते हैं।

यदि पृथ्वी को 50 सेंटीमीटर व्यास वाला मेजपृष्ठ ग्लोब माना जाए तो अभी तक वैज्ञानिकों के अनुसार प्रत्यक्ष अवलोकन किए जाने वाले पृथ्वी के आंतरिक भाग की इस ग्लोब पर मोटाई 1 मिलीमीटर होगी। यह आश्चर्यजनक बात है कि बीसवीं सदी तक वैज्ञानिक पृथ्वी के आंतरिक भाग के चित्र को पूर्णतः विकसित नहीं कर पाए हैं और सन् 1960 तक वे पृथ्वी की सतह का निर्माण करने वाली प्रक्रियाओं को ही समझ पाए थे।

भूपटल

पृथ्वी की भूपटल पर्त सेब की त्वचा जैसी है। यह अन्य तीन पर्तों की अपेक्षा अधिक पतली है। महासागरों के नीचे स्थित भूपटल पर्त को महासागरीय भूपटल कहा जाता है। महासागरीय भूपटल की औसत मोटाई 10 किलोमीटर होती है। महाद्वीपों के नीचे स्थित भूपटल पर्त को महाद्वीपीय भूपटल के नाम से जाना जाता है। भूपटल पर्त की औसत गहराई 35 किलोमीटर है। हिमालय के नीचे महाद्वीपीय भूपटल की गहराई 75 किलोमीटर तक है। पृथ्वी की अधिकतर महासागरीय भूपटल का निर्माण ज्वालामुखीय गतिविधियों से हुआ है। इस प्रकार चपटा समतल क्षेत्र लाखों वर्षों के दौरान जल क्रियाओं से अपरदित हुआ है। महासागर भी धरती के समान अनेक गुण रखते हैं। इनमें भी धरती के समान घाटियां और पर्वत उपस्थित है। 4,000 किलोमीटर क्षेत्र में फैला मध्य प्रशांत कटक क्षेत्र ज्वालामुखियों और दरारों की वृहद् श्रृंखला रखता है। नयी महासागरीय भूपटल का निर्माण 17 घन किलोमीटर प्रति वर्ष की दर से हो रहा है, जो महासागरीय क्षेत्र को बेसाल्ट कहलाने वाली आग्नेय चट्टानों से ढकता है। हवाई और आइसलैंड बेसाल्ट द्वीप के ढेर से बने दो द्वीपों के उदाहरण हैं।

महाद्वीपीय भूपटल मुख्यतया क्रिस्टलीय चट्टानों से बनी हुई है। इस पर्त में निम्न घनत्व तथा क्वार्टज (SiO_2) और फेल्सपार की अधिक मात्रा वाले तरणशील खनिज पाए जाते हैं। भूपटल के ऊपरी भाग का तापमान हवा के तापमान के अनुसार बदलता रहता है और इसके सर्वाधिक गहरे भाग का तापमान लगभग 870 डिग्री सेल्सियस होता है, जो चट्टानों तक को पिघलाने में समर्थ होता है। महाद्वीपीय भूपटल मुख्यतया ग्रेनाइट की बनी होती है।

पृथ्वी की भूपटल पर्त मुख्यतया दो प्रकार की चट्टानों से निर्मित होती है। इनमें से पहली ग्रेनाइट चट्टानें कठोर और क्रिस्टलीय होती हैं और दूसरी बेसाल्ट चट्टानें अप्रेक्षाकृत अधिक घनत्व वाली होने के साथ ठोस लावे के रूप में होती हैं। मुख्यतया महाद्वीपीय भूपटल ग्रेनाइट और महासागरीय भूपटल बेसाल्ट चट्टानों की बनी होती है। महासागरीय भूपटल की बेसाल्ट चट्टानें महाद्वीपीय भूपटल की ग्रेनाइट चट्टानों से अपेक्षाकृत अधिक घनत्व वाली एवं भारी होती हैं। वास्तव में महाद्वीप अधिक घनत्व वाली महासागरीय भूपटल पर तैर रहे हैं।

पृथ्वी के भूपटल को प्लेटें कहलाने वाले अनेक टुकड़ों के रूप में अध्ययन किया जाता है। यह प्लेटें भूपटल के नीचे स्थित नर्म और लचीली प्रावार के ऊपर तैरती रहती हैं। ठोस स्थलमंडल के नीचे की पर्त एस्फ़ाल्ट जैसा गाढ़ापन लिए नर्म क्षेत्र होता है जिसको दुर्बलतामंडल के नाम से जाना जाता है। स्थलमंडल प्रावार का वह क्षेत्र होती है जिस पर पृथ्वी की प्लेटें तैरती और गति करती हैं। ये प्लेटें अक्सर गतिमान रहती हैं लेकिन कभी-कभी ये कठोर होकर एक-दूसरे से मिलने वाली सीमा पर दबाव डालती हैं। कभी-कभी दाब के अधिक हो जाने पर ये चट्टानें मुड़ जाती हैं, जो भूकंप का कारण बनती हैं।

प्रावार

पृथ्वी का प्रावार क्षेत्र भूपटल पर्त से नीचे स्थित केन्द्र की आधी दूरी तक स्थित होता है। प्रावार क्षेत्र लगभग 2,900 किलामीटर मोटा होता है। यह क्षेत्र ठोस चट्टानों से बना होने के बाद भी उच्च श्यानता वाले तरल की भाँति व्यवहार करता है। पृथ्वी की अधिकतर ऊष्मा प्रावार में केन्द्रित होती है। यह भाग पृथ्वी की स्थूलता का निर्माण करता हुआ पृथ्वी के कुल द्रव्यमान का दो तिहाई हिस्सा रखता है। वैज्ञानिकों ने प्रावार को दो क्षेत्रों में वगीकृत किया है। ये दो क्षेत्र 480 किलोमीटर गहराई में स्थित अर्न्तवर्ती संक्रमण क्षेत्र द्वारा विभक्त रहते हैं। इनमे से पहला निम्न प्रावार क्षेत्र अर्न्तवर्ती संक्रमण क्षेत्र के नीचे स्थित होता है।

मुख्यतया ठोस चट्टानों को रखने वाली भूपटल पर्त के विपरीत प्रावार पर्त तैरते रहने वाले प्लास्टिक जैसे उच्च श्यानता वाले पदार्थों से बनी होती है। पिघली चट्टानों से लौह और मैग्नीशियम तत्वों से समृद्ध सिलिकेट्स चट्टानों से बनी इस पर्त की तुलना उबलते महाकुण्ड (कॉल्डन) से की जा सकती है। वास्तव में प्रावार का तरल भाग लगातार गति करता रहता है। तरल लावे से ऊपर की ओर चलने वाली संवहनी धाराओं द्वारा निर्मित अचर गोलक (फ्लक्स) द्वारा प्रावार का ठंडा और गर्म भाग एक-दूसरे से अलग होता है। इन धाराओं के कारण ही महाद्वीपीय प्लेटें गति करती हैं और यह घटना महाद्वीपीय विसरण के नाम से जानी जाती है। इसके बारे में आगे विस्तार से बात करेंगे।

प्रावार पर्त में ही हीरे और गारनेट (रक्तमणि) जैसे बहुमूल्य रत्न निर्मित होते हैं। हीरा कार्बन का शुद्ध रूप है, जो करीब 150 किलोमीटर गहराई में उच्च दाब के कारण क्रिस्टलीय संरचना प्राप्त करता है। यह प्रक्रिया इसे सर्वाधिक ज्ञात कठोर पदार्थ बनाती है। तीव्र गति से निकलते लावे से चट्टानों में जड़ा हीरा सतह पर आता है। चट्टानों से हीरे को पृथक कर तराशने के बाद इसको चमका कर आकर्षक और सुन्दर बनाया जाता है।

कच्चा हीरा शैलों से जुड़ा हुआ रहता है।

यहां एक प्रश्न हमारे मन में उठ सकता है कि हमने पृथ्वी की आंतरिक पर्तों के बारे में कैसे जाना। इस प्रश्न का उत्तर बड़ा सीधा है कि हम पृथ्वी को खोद (ड्रिल) कर उसके आंतरिक भाग में रोबोट भेज कर वहां के बारे में सूचनाएं प्राप्त कर सकते हैं। किंतु यह कहना जितना सरल है करना उतना ही कठिन। सन् 1990 में रूस के कोला प्रायद्वीप की सतह में किए गए विश्व के सबसे गहरे गड्ढे की गहराई 12. 3 किलोमीटर थी, किंतु यह पृथ्वी की गहराई के संदर्भ में एक आलपिन से अधिक नहीं है। अभी पृथ्वी की सतह से केन्द्र तक का 99 प्रतिशत हिस्सा अनछुआ ही है। इसलिए

भूविज्ञानी क्षुद्रग्रहों, चट्टानों, हीरों और भूकंपीय तरंगों से प्राप्त आंकड़ों को एकत्र कर अप्रत्यक्ष विधि से पृथ्वी के आंतरिक भाग के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं।

भूकंपों का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों (भूकंपवैज्ञानिकों) ने यह अवलोकन किया कि गर्म पिघली चट्टानों से गुजरने पर भूकंपीय तरंगों की गति कम हो जाती

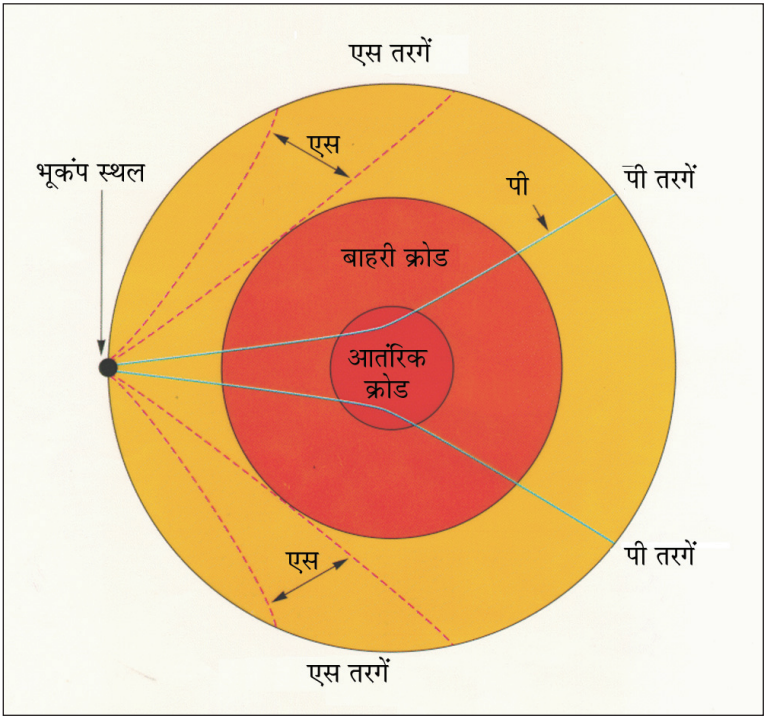

कुछ भूकंपीय तरंगे गर्म पिघले लावे से नहीं गुजर पातीं और इन तरंगों के अध्ययन से पृथ्वी की आंतरिक संरचना का अनुमान लगाया जा सकता है।

है और ठोस ठंडी चट्टानों से गुजरने पर इन तरंगों की गति बढ़ जाती है। भूकंप आने पर इससे मुक्त कंपन यानी भूकंपीय तरंगें सभी दिशाओं में संचरित होती हैं। इन तरंगों को विभिन्न स्थानों पर संसूचित कर मापा जा सकता है। चिकित्सा विज्ञान में शरीर के आंतरिक भाग का केट -केन द्वारा किए जाने वाले अवलोकन के समान भूकंपवैज्ञानिकों

द्वारा भूकंपों की हजारों घटनाओं द्वारा उत्पन्न भूकंपीय तरंगों के समय को ज्ञात कर प्रावार के तापमान का त्रि-आयामी चित्र बनाया गया। इस प्रकार भूकंप से प्राप्त आकड़ों के द्वारा भूवैज्ञानिकों ने प्रावार के आकार और गहराई का परीक्षण किया।

धात्विक क्रोड (मेटेलिक कोर)

सतह से करीब 2,900 किलोमीटर गहराई में या प्रावार के ठीक नीचे पृथ्वी का सबसे आंतरिक भाग 'क्रोड' विद्यमान है। क्रोड पर्त पृथ्वी के लगभग एक तिहाई द्रव्यमान के बराबर होती है। यह पर्त लौह और निकिल की मिश्र धातुओं के साथ कुछ मात्रा में सल्फर और ऑक्सीजन जैसे तत्वों को रखती है। इस पर्त से भूकंपीय तरंगों के न गुजर पाने के कारण वैज्ञानिक वर्ग यह मानता है कि यह पर्त पिघली अवस्था में है। फिर भी सतह से 5,159 किलोमीटर गहराई में स्थित क्रोड का छोटा सा केन्द्रीय भाग ठोस अवस्था में मिलता है। क्रोड का तापमान बहुत उच्च होता है। इसके बाहरी भाग का तापमान 4,000 से 5,500 डिग्री सेल्सियस तक और केन्दीय भाग का तापमान शायद सूर्य की सतह से ज्यादा गर्म लगभग 5,500 से 7,500 डिग्री सेल्सियस तक होता है।

क्रोड को आंतरिक क्रोड और बाहरी क्रोड नामक दो पर्तों में बांटा गया है। आंतरिक क्रोड की मोटाई लगभग 2,200 किलोमीटर है। क्रोड पर्त मुख्यतया लौह एवं कुछ मात्रा में निकिल से बनी होने के साथ 10 प्रतिशत हिस्से में सल्फर और ऑक्सीजन तत्वों को समाहित किए होती है। बहुत गर्म होने के कारण ये धातुएं सदैव पिघली अवस्था में रहती है। आंतरिक क्रोड को पृथ्वी का केन्द्र भी कहा जाता है। 1,250 किलोमीटर मोटाई वाला आंतरिक क्रोड ठोस होता है। यह भाग मुख्यतया लौह, निकिल और कुछ हल्के तत्वों से बना होता है। बाहरी क्रोड की तुलना में आंतरिक क्रोड का तापमान अधिक होता है। इस पर्त का तापमान लगभग 5,500 से 7,500 डिग्री सेल्सियस होता है लेकिन अधिक दाब के कारण यह पर्त पिघलती नहीं है।

आंतरिक क्रोड और बाहरी क्रोड दोनों संयुक्त रूप से पृथ्वी की चुम्बकीयता के लिए जिम्मेदार होते हैं। सन् 1960 में एक अंग्रेज भौतिकविद् विलियम गिल्बर्ट ने पहली बार पृथ्वी के एक विशाल चुम्बक के समान व्यवहार करने के विचार को अपनी पुस्तक

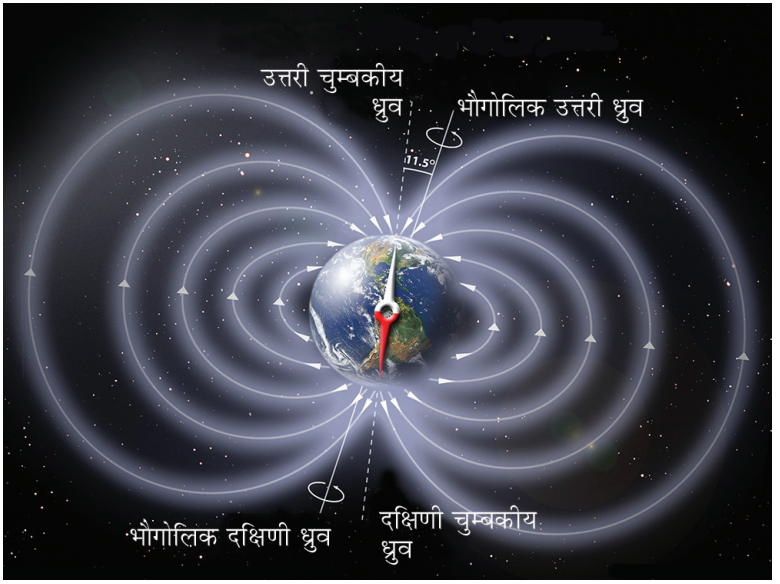

पृथ्वी विशाल चुंबक की भाँति व्यवहार करती है, इसी कारण हमारे लिए चुंबकीय दिक्सूचक का उपयोग दिशा का पता लगाने में करना संभव है ।

'डी मेगनेट, मेगनेटिक्विश कोपोरिबस' में रखा, किंतु गिल्बर्ट पृथ्वी की चुम्बकीयता की उत्पत्ति को नहीं समझा पाए। 19 वीं सदी में हुए प्रयोगों के आधार पर यह दर्शाया जा सका कि किस प्रकार विद्युत्धारा से चुंबकीय बल उत्पन्न किया जा सकता है। इस प्रकार यह प्रयोग इस तथ्य की भी पुष्टि करता है कि चुंबकीयता विद्युत् बल का ही एक अंग है। हमारी पृथ्वी के संदर्भ में यह माना गया कि इसके बाहरी क्रोड में पिघली अवस्था में रहने वाला लौह-निकिल के संचरण से ही यह तरल पर्त चक्रण करती है। यह घटना एक प्रकार के डायनामो बल को उत्पन्न करती है, जिसकी वजह से पृथ्वी एक विशाल चुंबक की तरह व्यवहार करती है। इस गुण के कारण ही हम चुंबकीय दिक्सूचक (कम्पास) का उपयोग दिशासूचक के रूप में कर पाते है। यदि पृथ्वी चुंबक की भाँति व्यवहार प्रदर्शित नहीं करती तब हम सूर्य, चांद और तारों के सिवाय भिन्न दिशा ज्ञात नहीं कर सकते थे। पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र इसके चारों ओर एक ढाल की भाँति व्यवहार करता है, जो सूर्य से आने वाले ऊर्जा कणों, विशेषकर सौर-हवाओं से हमारी रक्षा करता है।

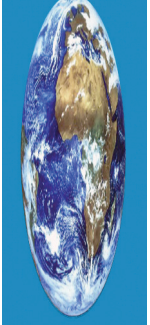

3

खिसकते महाद्वीप

यदि आप विश्व के मानचित्र को देखेंगे तो आप पाएंगे कि दक्षिण अमेरिका का पूर्वोत्तर तटीय किनारा और अफ्रीका का पश्चिमी तटीय किनारा दोनों एक-दूसरे में ताला-चाबी जैसे सटीक तरीके से गुथे दिखेंगें। इस विशिष्ट लक्षण को पहली बार सत्रहवीं सदी में ब्रिटिश वैज्ञानिक सर फ्रान्सिस बेकेन ने देखा। उनके अवलोकन से यह बात सामने आई कि क्या इस विशिष्ट आकार की समानता में शुद्ध संयोग या इसके अलावा कुछ विशेष था, किंतु बेकन के पास इस बात का कोई उत्तर नहीं था। इस घटना की प्रथम सही व्याख्या जर्मन मौसम विज्ञानी अल्फ्रेड वैगनर ने सन् 1912 में की। उनके अनुसार अतीत में विश्व के सभी महाद्वीप आपस में एक विशाल महाद्वीप के आकार में जुड़े थे। इस विशाल महाद्वीप को पैंजिया (जिसका ग्रीक भाषा में अर्थ सभी भूखण्ड है) नाम दिया गया था। करीब 20 करोड़ वर्ष पूर्व पैंजिया के टूटने से इसके हिस्से एक-दूसरे से दूर जाने लगे थे। इसी घटना के परिणामस्वरूप महाद्वीपों का वर्तमान स्वरूप अस्तित्व में आया है।

यह स्वीकार किया गया तथ्य है कि पृथ्वी के इतिहास में महाद्वीपों की अनेक बार आपस में टकराहट से अतिमहाद्वीपों का निर्माण हुआ। यद्यपि महाद्वीपों पर भूपटल पर्त मोटी है, लेकिन यह महासागरीय भूपटल की तुलना में अधिक आसानी से टूटती है। जैसे ही अतिमहाद्वीप टूटकर छोटे टुकड़ों में बंटने लगा, पृथ्वी के प्रावार से पदार्थ निकलकर उस रिक्त स्थान को भरने लगे, जिससे नयी महासागरीय भूपटल का निर्माण हुआ। जैसे-जैसे महाद्वीप दूर होते गए वैसे-वैसे नए महासागर बेसिनों

का निर्माण होने लगा। पृथ्वी की सतह का लगभग एक तिहाई भाग महासागरीय भूपटल से घिरा हुआ है, इसलिए यह भाग टकराहट के पहले बहुत दूर नहीं गए। जब दो महाद्वीप टकराए तब एक पुराना महासागर बेसिन नष्ट हो गया। महाद्वीप संभवतः पिछले दो अरब वर्षों या इससे भी अधिक समय से गतिमान है।

अतिमहाद्वीप पैंजीया

लगभग 80 करोड़ वर्ष पहले महाद्वीपों ने आपस में जुड़कर रोडिनिया कहलाने वाले एक विशाल महाद्वीप का निर्माण किया था। तब आज का उत्तरी अमेरिका इस महाद्वीप के केन्द्र में था। करीब 75 करोड़ वर्ष पहले रोडिनिया अनेक भागों में टूट गया, ये भाग करीब 50 से 25 करोड़ वर्ष पूर्व पुनः टकराए। अपॉलेचीन पर्वत का ऊपर उठना आज के उत्तरी अमेरिका, यूरोप और अफ्रीका की आपसी टकराहट का ही परिणाम है। इसी प्रकार आज के साइबेरिया और यूरोप वाले भागों की टकराहट के कारण यूराल पर्वत का निर्माण हुआ।

करीब 25 करोड़ वर्ष पहले पुनः इन महाद्वीपों ने आपस में जुड़कर पैंजिया नाम के अतिमहाद्वीप का निर्माण किया। तब पैंजिया के आसपास पेन्थेलासा नाम का

एकमात्र विश्वव्यापी महासागर था। सन् 1937 में दक्षिणी अफ्रीकन भूविज्ञानी अलेक्जेंडर एल. डु टोइट ने वैगनर के सिद्धांत को परिशोधित किया। इस परिशोधित सिद्धांत के अनुसार पैंजिया अतिमहाद्वीप दो भागों में बंट कर उत्तर में लॉरेशिया महाद्वीप और दक्षिण में अब गोंडवाना (गोंडवाना केन्द्रीय भारत में गोंड जनजातियों के लिए पहचाने जाने वाला क्षेत्र है) के नाम से प्रसिद्ध गोंडवानालैंड महाद्वीप बना।

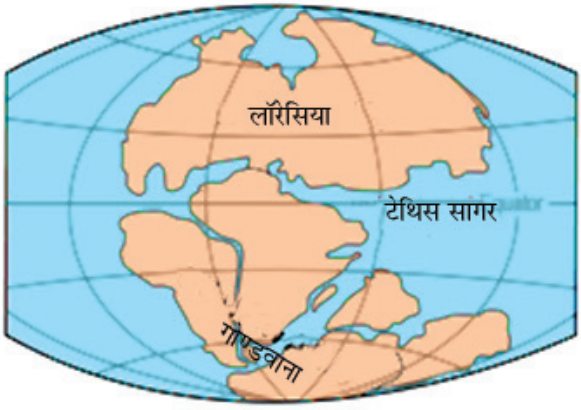

20 करोड़ वर्ष पूर्व

पैंजिया अतिमहाद्वीप, लॉरेसिया और गौंडवानालैंड नामक दो महाद्वीपों में टूट गया, जो टेथिस सागर द्वारा अलग-अलग थे।

यह दोनों महाद्वीप टेथिस महासागर द्वारा अलग थे। भारतीय महाद्वीप को अपवाद मानकर समय के साथ लॉरेशिया उत्तरी अमेरिका, यूरेशियन भूखण्ड और ग्रीनलैण्ड में टूट गया। उस समय का गोंडवानालैण्ड हिस्सा भी टूटकर वर्तमान विश्व के दक्षिणी भूखण्डों में शामिल अफ्रीका, दक्षिणी अमेरिका, भारत, अंटार्कटिका और आस्ट्रेलिया में विभक्त हो गया।

आज वैज्ञानिकों ने विसरीत महाद्वीपों के सिद्धांत के समर्थन में अनेक भूगर्भिय तथ्यों को जमा कर लिया है। करोड़ों वर्षों से चलने वाली यह परिघटना महाद्वीपीय विसरण कहलाई। इस घटना में विसरण की गति प्रति वर्ष कुछेक सेंटीमीटर तक मापी जाती है। उदाहरण के लिए 25 करोड़ वर्ष पहले के समय

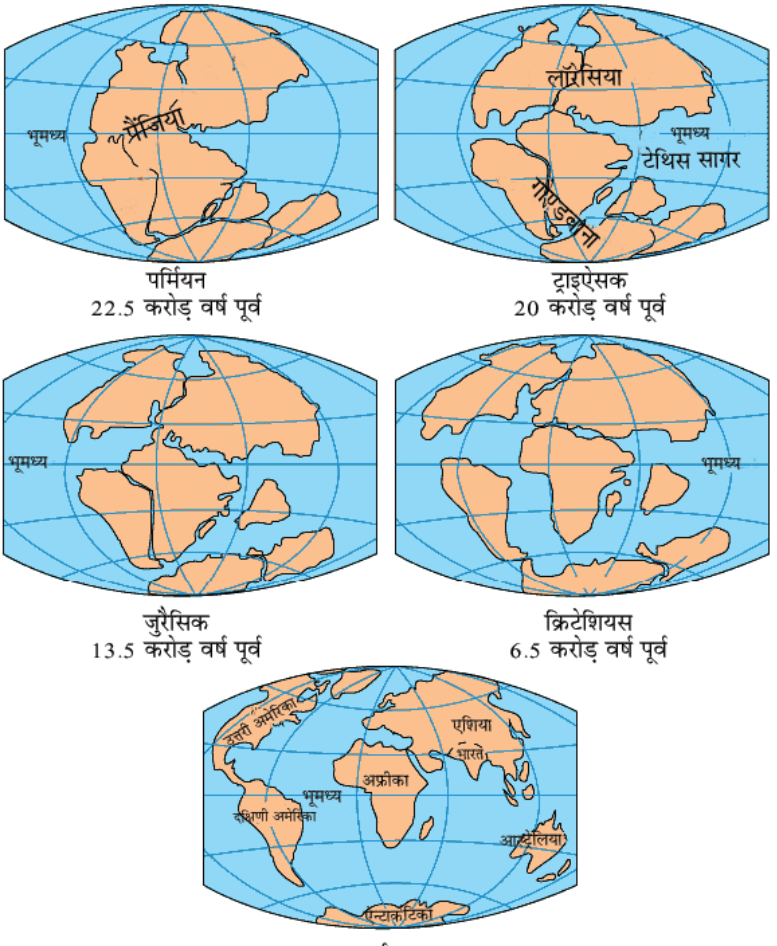

लॉरेसिया और गौंडवानालैंड के टूटने से वर्तमान समय के महाद्वीपों का निर्माण हुआ।

में अंटार्कटिका, दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अमेरिका और भारत के हिस्सों में हिमाच्छादन (ग्लैसिएशन) के प्रमाण मिले हैं। इस बात से यह साफ जाहिर होता है कि दक्षिणी ध्रुव के निकट वाले ये सभी हिस्से एक समय आपस में जुड़े हुए थे। इसी प्रकार अटलांटिक से सटे अमेरिकी क्षेत्र में समान प्रकार की चट्टानें और भौगोलिक

संरचना मिली हैं। उदाहरण के लिए ब्राजील के तटीय क्षेत्र में मिलने वाली प्राचीन चट्टानों की पट्टी की पश्चिमी अफ्रीका के चट्टानों से समानता देखी गई है। इसके अलावा केवल 14.4 करोड़ से 20.8 करोड़ वर्ष पुराने उत्तरी अमेरिका एवं अफ्रीका की अटलांटिक तटीय रेखा के आरंभिक अवसाद यह सुझातें हैं कि उस समय के पहले यहां महासागर मौजूद नहीं थे।

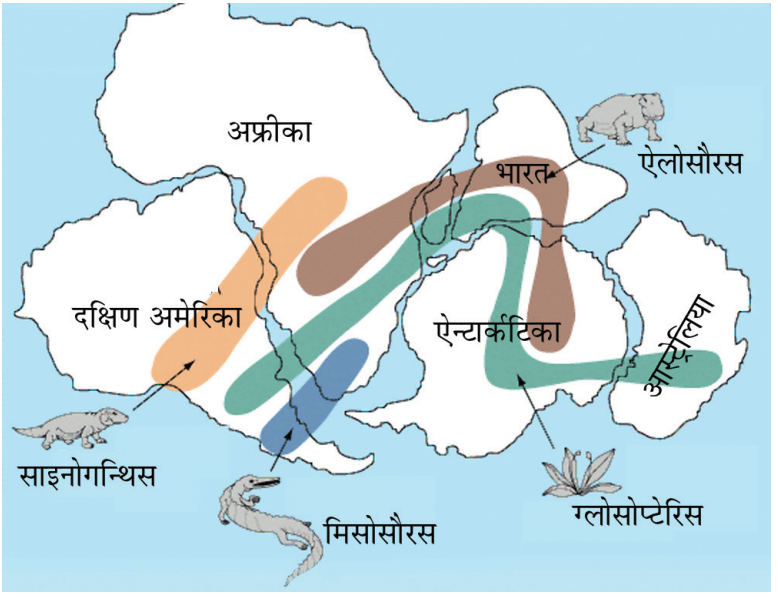

विभिन्न महाद्वीपों पर पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं के मिले जीवाश्मों की समानता से महाद्वीपीय विसरण सिद्धांत के पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध होते हैं।

प्लेट विवर्तनिकी

महाद्वीपीय विसरण का विचार इस सिद्धांत पर आधारित है कि पहले महाद्वीपों की स्थिति वर्तमान स्थिति से भिन्न थी। इस प्रकार आज के कुछ भूखण्ड पहले कभी किसी अन्य महाद्वीप के रूप में थे, बाद में ये भूखण्ड गति करते हुए अपनी वर्तमान स्थिति में पहुंचे। किंतु यहां एक समस्या उत्पन्न होती है। एक महाद्वीप बहुत विशाल होता है उसका तैरना इतना आसान नहीं है क्योंकि एक हल्का सा मालवाहक जहाज

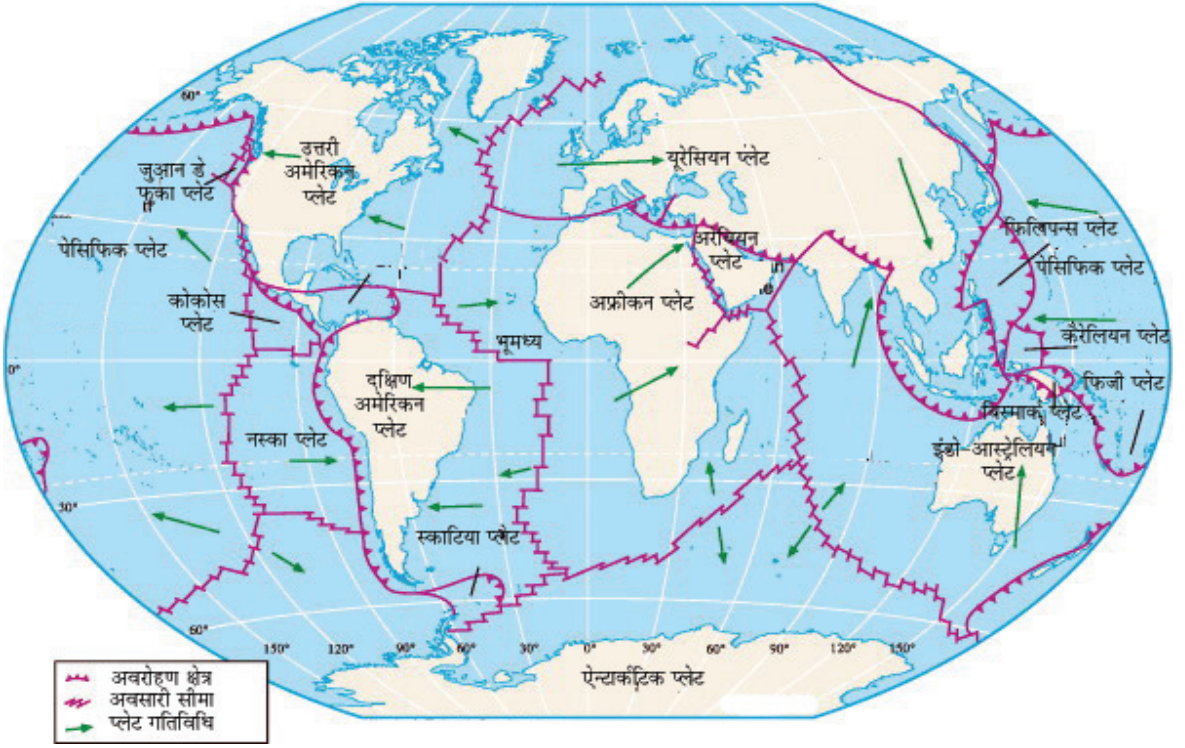

पृथ्वी की सबसे बाहरी पर्त दर्जनों या और अधिक छोटी एवं बड़ी प्लेटों में बंटी हुई है।

का वजन यदि उसके द्वारा हटाये गये पानी के वजन से कम नहीं होगा तो वो ए क पत्थर की तरह डूब जाएगा। किसी भी परिस्थिति में वैगनर ने यह दावा नहीं किया कि महाद्वीप तैर रहे हैं, उसने केवल इनकी गति के बारे में बताया। अब यह सवाल उठता है कि ये कैसे गति कर रहे हैं।

इस पहेली का उत्तर भूगर्भशास्त्र की प्लेट विवर्तनिकी शाखा ने सुझाया। भूगर्भशास्त्र के अंतर्गत पृथ्वी के भूपटल से संबंधित वलन और भ्रंशन का अध्ययन किया जाता है। प्लेट विवर्तनिकी द्वारा पृथ्वी के आकार संबंधी विकास को स्थलमंडल की विशाल प्लेटों की गति के संदर्भ में समझाया जा सकता है। इस व्याख्या से वैज्ञानिकों द्वारा सदियों से परिकल्पित प्रश्नों, जैसे विश्व के किसी क्षेत्र में आने वाले भूकंप एवं ज्वालामुखी उद्गारों और हिमालय व एल्प्स जैसी महान पर्वत शृंखलाओं के निर्माण, के बारे में उत्तर दिया जा सकता है।

भौगोलिक संदर्भ में एक प्लेट विशाल, कठोर, और ठोस चट्टानों की पट्टी होती है। विवर्तनिक (टेक्टोनिक) शब्द ग्रीक भाषा का शब्द है जिसका अर्थ 'निर्माण करना है'। इन दोनों शब्दों को साथ में रखने पर हमें प्लेट विवर्तनिक शब्द प्राप्त होता है, जो पृथ्वी की सतह को प्लेटों से बना हुआ बताता है। प्लेट विवर्तनिक के सिद्धांत के अनुसार पृथ्वी की सबसे बाहरी पर्त एक दर्जन से भी अधिक बड़ी या छोटी प्लेटों के रूप में बंटी हुई है, जो एक-दूसरे के सापेक्ष गति कर रही हैं।

प्लेट विवर्तनिक का सिद्धांत बड़ा सरल है। हम यह पहले ही जान चुके हैं कि पृथ्वी का स्थलमंडल बड़ी और छोटी महाद्वीपीय प्लेटों से बना है और ये प्लेटें एक दूसरे पर रगड़ाती रहती हैं जो पिघली चट्टानों की मुलायम पर्त, जो दुर्बलतामंडल (लिथोस्फियर) कहलाती है, पर फिसलती रहती है। जब दो प्लेटें टकराती है तब उत्पन्न परिणामी दाब बहुत अधिक होता है, जो सतह को विरूपित कर वलित रूप में पर्वत श्रेणियों का निर्माण करता है। ऐसा माना जाता है कि विश्व का सबसे ऊंचा हिमालय पर्वत करीब 5 करोड़ वर्ष पहले इण्डियन प्लेट और यूरेशियन प्लेटों की आपसी टक्कराहट से प्रौगेतिहासिक टेथिस सागर में से ऊपर उठा है। प्लेटों में टक्कर होने पर पृथ्वी की सतह पर लंबे और समांतर

वलन के आश्चर्यजनक उठाव के फलस्वरूप पर्वत शृंखलाओं का निर्माण हुआ। विश्व के 7,000 मीटर से अधिक ऊंचाई वाली सभी पर्वत श्रेणियों की उत्पत्ति इसी प्रकार हुई है। हिमालय के शिखरों पर पाए जाने वाले समुद्री जीवों के

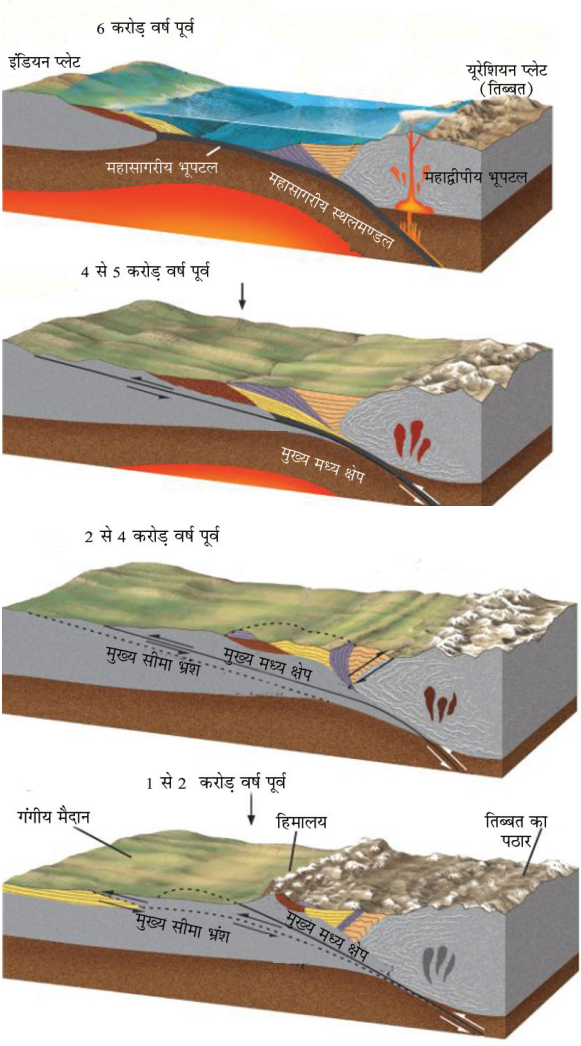

करीब 6 करोड़ वर्ष पूर्व इण्डियन प्लेट और यूरेशियन प्लेट के मध्य हुई टकराहट के कारण हिमालय पर्वत शृंखला और तिब्बत के पठार का उभार हुआ था।

पृथ्वी के सबसे ऊंचे स्थान माउंट एवरेस्ट विवर्तनिक प्रक्रियाओं के कारण टेथिस सागर के नीचे से ऊपर उठा है।

जीवाश्मों से यह बात स्पष्ट होती है कि इसकी उत्पत्ति सागर से हुई है। हिमालय को नवीन वलित पर्वतों की श्रेणी में रखा गया है, क्योंकि यह विश्व के सभी पर्वतों में सबसे नया है।

समुद्री अधस्थल का फैलाव

यह हम जानते हैं कि पृथ्वी की सतह का दो तिहाई भाग महासागरों द्वारा घिरा हुआ है। 19वीं सदी के पहले खुले महासागरों की गहराई व्यापक रूप से रहस्यमयी विषय थी। उस समय तक अधिकतर लोग यही समझते थे कि समुद्र का आधार समतल और सपाट है। फिर भी 16वीं सदी के आरंभ में कुछ नाविकों ने खुले समुद्र की गहराई में भिन्नता की बात कही थी। उस समय तक जैसा कि माना जाता था कि समुद्र की सतह समतल है पर उन नाविकों ने असहमति व्यक्त की।

सन् 1947 में अमेरिका के खोजी यान अटलांटिक के भूकंपविज्ञानियों ने आश्चर्यजनक खोज की। उन्होंने पाया कि अटलांटिक के तल पर स्थित अवसादी पर्त अधिक पतली है। पहले वैज्ञानिकों का मानना था कि महासागरों की उपस्थिति करीब 4 अरब वर्ष पहले से है और इसकी अवसादी पर्त बहुत मोटी है। इस प्रकार इस पतली अवसादी पर्त ने एक पहेली को जन्म दिया कि समुद्री अधस्थल में बहुत कम अवसाद का ढेर और मलवा क्यों जमा है? इस पहेली का हल नये अनुसंधानों की व्याख्या के द्वारा दिया जा सका। इस व्याख्या ने प्लेट विवर्तनिकी के सिद्धांत में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सन् 1960 में अमेरीकी भूभौतिकविद् हेरी एच. हेस ने सर्वप्रथम विश्व के समुद्रों के तल में फैलाव और महाद्वीपीय प्लेटों में गति के मध्य संबंधों को उजागर किया। हेस ने विश्वसनीय क्रियाविधि द्वारा अपनी बात समझाई। गहरे समुद्री तल के बारे में अपनी नयी खोज के आधार पर हेस ने पृथ्वी के प्रावार के पिघले पदार्थों के जो विश्व भर के महासागरों में करीब 40,000 किलोमीटर लंबाई में सतत् रूप से फैली हुई है। मध्य-महासागरीय कटक की चोटी के साथ इकठ्ठा होने की बात कही। मध्य-महासागरीय कटक पृथ्वी पर सबसे लंबी पर्वत श्रृंखला है, लेकिन यह समुद्र के तल में पायी जाती है। इस क्षेत्र में अक्सर भूकंप और ज्वालामुखीय गतिविधियां घटित होती रहती हैं।

मध्य-महासागरीय कटक के साथ जब सागरीय जल के संपर्क में आने पर मैग्मा ठंडा होता है तब यह कटक की दोनों दिशाओं में फैलता है। यह फैलाव ठोस

बेसाल्ट के नवीन महासागरीय तल का निर्माण करता है। यह अनुमान लगाया गया है कि इस प्रक्रिया से प्रतिवर्ष 17 घन किलोमीटर की दर से नई महासागरीय भूपटल का निर्माण हो रहा है। इसके अलावा भूगर्भ से निकलने वाला मैग्मा विचलन लाने के साथ महाद्वीपों को विसरीत भी करता है। उदाहरण के लिए अटलांटिक महासागर की सीमा को छूने वाले महाद्वीप मध्य-अटलांटिक कटक क्षेत्र से प्रतिवर्ष 1 से 2 सेंटीमीटर

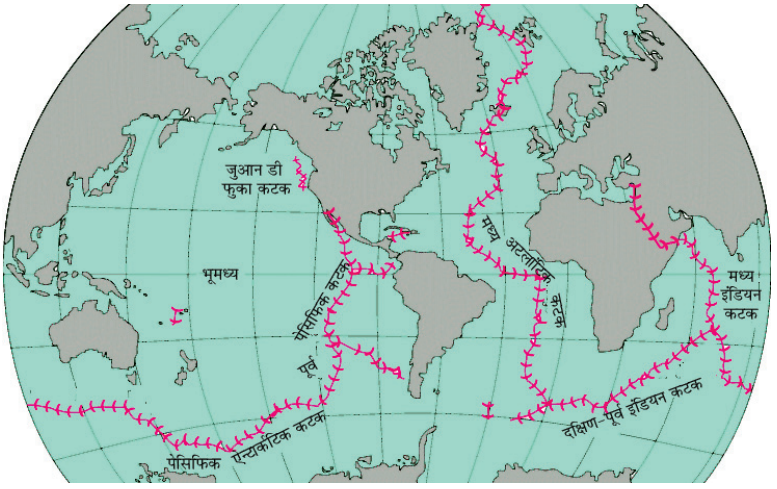

करीब 40,000 किलोमीटर लंबी अंतःसागरीय मध्य-महासागरीय कटक शृंखला विश्व के सभी महासागरों में फैली हुई है।

की दर से दूर हो रहे हैं। इस प्रकार महासागरीय घाटियों की चौड़ाई दो गुनी बढ़ती जा रही है।

महासागरीय तल अनन्त रूप से नहीं फैल रहे हैं। वास्तव में एक प्रक्रिया के द्वारा महासागरीय भूपटल लगातार नष्ट भी हो रही है। महासागरीय तल का विनाश प्लेट सीमा पर स्थित 'अवरोहण क्षेत्र' में होता है। अवरोहण क्षेत्र पर महासागरीय भूपटल या तो महाद्वीपीय या महासागरीय भूपटल के नीचे जाती है। ऐसी घटना दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी घाट पर घटित होती है, जहां महासागरीय भूपटल पृथ्वी की प्रावार की ओर जहां से यह क्षेत्र उत्पन्न हुआ था, पुनः नीचे

की ओर प्रवेश कर विलेय हो जाता है। इस प्रकार हम मध्य-अटलांटिक कटक क्षेत्र में नए महासागरीय तल का निर्माण और पुराने महासागरीय तल लगातार अवरोहण क्षेत्र में खत्म होते रहते हैं जिसके परिणामस्वरूप महासागरीय तल लगातार फैलते रहते हैं परन्तु महासागरीय तल अधिक अवसाद को एकत्र करनें में कभी समर्थ नहीं होंगे।

आज वैज्ञानिकों ने समुद्री अवसाद की मोटाई का मापन और उसकी तली के पदार्थों की सही उम्र का पता लगा लिया है जो महासागरीय तल के फैलाव के संबंध में अतिरिक्त प्रमाण उपलब्ध कराने वाले सबसे पुराने अवसाद जो विभिन्न विधियों से प्राप्त किया गया है वह 2.8 करोड़ वर्ष से अधिक पुराना नहीं है। यह समय उस समय से बहुत कम है जब से महासागरों का अस्तित्व इस पृथ्वी पर है।

चुंबकीय विसंगति

महासागरीय अधोस्थल या तल की चुंबकीयता के अध्ययन से हमें समुद्री तल के फैलाव के बारे में अधिक विश्वसनीय अवधारणाएं प्राप्त होती हैं। सन् 1950 में वैज्ञानिकों ने प्रशांत महासागर की तली में उपस्थित चट्टानों द्वारा उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्र का खाका तैयार किया है। तब उन्हें पता लगा कि चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता उनके द्वारा गणना की गई तीव्रता से बहुत अधिक है। उनके इस मापन ने यह दर्शाया कि समुद्री द्रोणियों में बहुत से चुंबकीय विसंगति क्षेत्र (जहां एक स्थान से दूसरे स्थान पर चुंबकीय क्षेत्र अलग होता है) हैं। यदि उस क्षेत्र का चुंबकीय क्षेत्र औसत से अधिक है तब चुंबकीय विसंगति धनात्मक और औसत से कम होने पर नकारात्मक होती है।

समुद्री अधस्थलों की चट्टानों में चुंबकीय विसंगति का कारण पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र में होने वाला नियतकालिक बदलाव है, यह बदलाव औसतन प्रति 2,00,000 वर्षों या इससे कुछ अधिक समय में होता है। वास्तव में भूगर्भिक प्रमाणों के अनुसार पिछले अरबों वर्षों के दौरान पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र कई बार पलटा है। ज्वालामुखीय चट्टानें जो महासागर अधस्थल का निर्माण करती है चुम्बकत्व प्राप्त कर लेती है। क्योंकि जब मैग्मा ठंडा होता है तब चट्टानों में

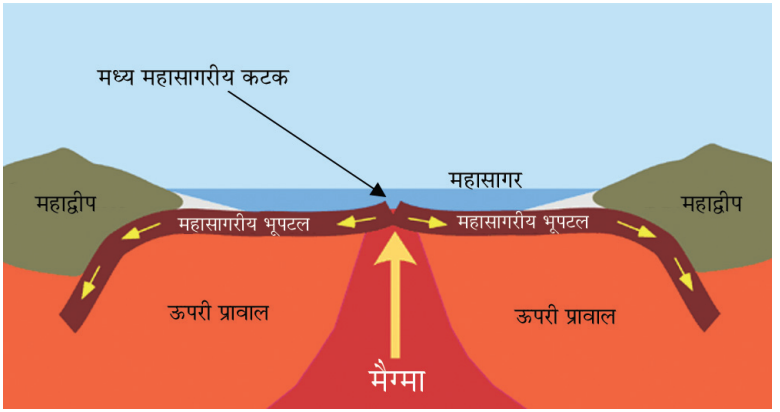

मध्य महासागरीय कटक से निकले पिघले लावे के ठंडा होने पर नए महासागरीय अधस्थल का निर्माण होता है।

उपस्थित चुंबकीय खनिज उस समय पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र की शक्ति प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार प्राकृतिक रूप से चट्टानों के ठंडा होने पर उनकी चुंबकीय शक्ति और दिग्विन्यास विभिन्न समयों पर विभिन्न प्रकार से कम हुआ है।

पृथ्वी के उत्तरी भौगोलिक गोलार्द्ध में जब उसका उत्तरी चुंबकीय ध्रुव होता है तब चट्टानों के ठंडी और ठोस होने धनात्मक पर चुंबकीय विसंगति पैदा होती है।

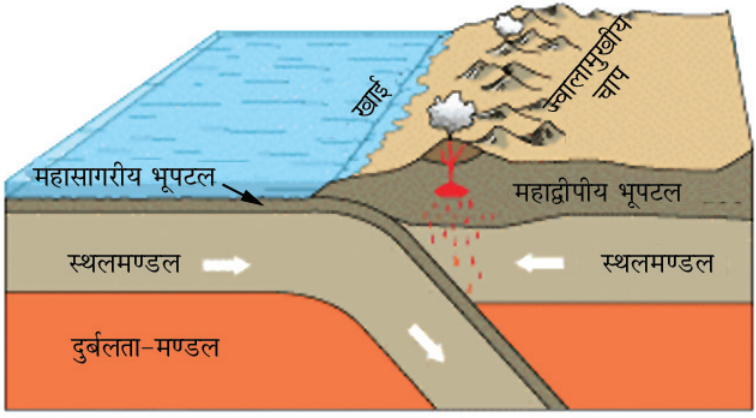

अवरोहण क्षेत्र पर महासागरीय भूपटल महाद्वीपीय भूपटल के नीचे जाती है, जो इस क्षेत्र में भूकंप और ज्वालामुखीय गतिविधियों को बढ़ाती है।

चट्टानों के चुंबकीय क्षेत्र के कारण पृथ्वी की चुंबकीय क्षमता बढ़ गई। नकारात्मक चुंबकीय विसंगति वह चुंबकीय विसंगति है जो वांछित बल से कमजोर होती है। पृथ्वी के दक्षिणी भौगोलिक गोलार्द्ध में जब उत्तरी चुंबकीय ध्रुव सिथत होता है तब चट्टानों के ठंडी और ठोस होने पर नकारात्मक चुंबकीय विसंगति पैदा होती है। चट्टानों के चुबकीय क्षेत्र द्वारा पृथ्वी की चुंबकीयता के कम होने पर पृथ्वी का परिणामी चुबकीय क्षेत्र कम हो जाता है। मध्य प्रशांत कटक के शिखर पर किए गए सर्वेक्षण ने यह पता चला कि कटक के अक्ष के समांतार लंबी पट्टी में चुंबकीय विसंगति उपस्थित है, और यह चुंबकीय विसंगति कटक के दोनों और सन्तुलित रूप में है। इस प्रकार महासागरीय अधस्थल की चट्टानों के चुंबकीय क्षेत्र में अंतर महासागरीय तल के फैलाव के संबंध में पर्याप्त प्रमाण देता है।

अग्नि वलय

'अवरोहण क्षेत्र' पर जहां महासागरीय भूपटल, महाद्वीपीय भूपटल से टकराती है, वहां महाद्वीपीय भूपटल अपने कम घनत्व के कारण महासागरीय भूपटल के ऊपर चढ़ जाती है। परिणामस्वरूप महासागरीय भूपटल और ऊपरी-प्रावार (स्थलमंडल) महाद्वीपों के नीचे समा जाती है। यहां कुछ गहराई तक वे भयंकर ऊष्मा और दाब के कारण पिघलने लगते हैं। जब मैग्मा और कुछ पिघली चट्टानें दाब के कारण सतह पर वापस आती हैं तो इस प्रक्रिया में महासागरीय भूपटल के कुछ भाग के पिघलने पर ज्वालामुखी उद्गार और लावा-प्रवाह की घटनाएं घटित होती है। ये ज्वालामुखीय घटनाएं अधिकतर अवरोहण क्षेत्र के ऊपर ही देखी गई हैं जिन्होंने भव्य पर्वत शृंखलाओं का निर्माण किया है। प्रशांत महासागर के चारों ओर अग्नि-वलय के नाम से जाने वाली सतत् पर्वत श्रेणी का विकास इसी प्रकार हुआ है। यहां अवरोहण क्षेत्र का चाप लंबा हैं जहां ऊपरी प्रावार पर मैग्मा कोष्ठों का निर्माण होता है जो उच्च ज्वालामुखीय गतिविधियों को जन्म देता है। यह चाप दक्षिणी अमेरिका के उत्तर से शुरू होता हुआ केशकेड पर्वत और अलास्का के ऐल्यूशियन द्वीप से होता हुआ दक्षिण की तरफ जापान, दक्षिणी एशिया और सतत् रूप से दक्षिण में न्यूजीलैंड की ओर तक पहुंचता है। विश्व के आधे से अधिक सक्रिय ज्वालामुखी इस अग्नि वलय के ऊपर स्थित है। इसके साथ ही विश्व के 81 प्रतिशत बड़े ज्वालामुखी अग्नि वलय क्षेत्र में ही आते हैं।

जब भूपटल में चट्टानें विपरीत दिशा से टूटती है तब भूकंप आते हैं। चट्टानों का इस प्रकार टूटना भ्रंश कहलाता है। चट्टानें एक-दूसरे को विपरीत या किनारों की तरफ से धक्का लगाती हैं। प्लेटों के बीच की सीमाओं को भ्रंश कहा जाता है। कभी-कभी भ्रंश से दूर प्लेटों के मध्य लगने वाले बल के कारण चट्टानों में टूटन और फिसलन होती है। वह सीमा जहां दो प्लेटें एक-दूसरे पर सरकती हैं, रूपांतरित भ्रंश

प्रशांत महासागर के चारों और स्थित अग्नि वलय सतत् पर्वत शृंखला है। यह लाल त्रिकोणीय क्षेत्र भूकंप और ज्वालामुखीय गतिविधियों को इंगित करता है।

कहलाती है। अमेरिका के कैलिफोर्निया का 'द सेन एंडरीज भ्रंश' रूपांतरित भ्रंश है। जहां पैसिफिक प्लेट कहलाने वाला भूपटल का एक हिस्सा कैलिफोर्निया के उत्तरी पश्चिमी हिस्से को शेष उत्तरी अमेरिका से दूर ले जा रहा है। इण्डियन प्लेंट का यूरेशियन प्लेट को विपरीत धक्का लगाने वाली सीमा से लगा भ्रंश भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र और उत्तर में हिमालय पट्टी में अक्सर घटित होने वाली भूकंप की घटना के लिए उत्तरदायी होता है।

इस प्रकार हमने जाना हैं कि हमारी पृथ्वी एक क्रियाशील ग्रह है। अब हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से यह भी जानते हैं कि प्लेट विवर्तनिकी ने अतीत और वर्तमान की सभी भौगोलिक गतिविधियों को प्रभावित किया है। वास्तव में यह संकेत करता है कि पूरी पृथ्वी की सतह लगातार परिवर्तित हो रही है।

यही नहीं प्लेट विवर्तनिक के ज्ञान ने हमें भूकंप और ज्वालामुखी उद्गार जैसी प्रचंड भूगर्भिय घटनाओं को समझने का ज्ञान भी दिया है। इन प्रचंड घटनाओं से प्रचंड ऊर्जा मुक्त होती है। हालांकि हमारा प्लेट विवर्तनिक प्रक्रिया पर कोई नियन्त्रण नहीं है, लेकिन हम इन प्रक्रियाओं को समझ कर ऐसा रास्ता खोज सकते हैं जिससे पृथ्वी की विस्मयकारी शक्ति को प्रदर्शित करने वाली ऐसी घटनाओं से जीवन और संपत्ति `को होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है।

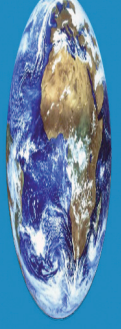

4

हवा, पानी और चट्टानें

सौरमंडल के अन्य ग्रहों से हमारी पृथ्वी का विशिष्ट गुण यहां जीवन को संजोए रखने वाले वातावरण का मौजूदर होना है। लेकिन आज हमें दिखाई देने वाला यह वातावरण सदैव इस अवस्था में नहीं रहा है। हमारी पृथ्वी कई अरब वर्षों के दौरान होने वाले पर्वतों के उत्थान, समुद्री तल का फैलाव और अन्य ऐसी ही अनेक भूगर्भिय घटनाओं के तीव्र परिवर्तनों से गुजरते हुए गर्म पिघले लावे से आज अपनी वर्तमान अवस्था में पहुंची है। इन सभी क्रियाओं के सम्मिलित परिणामस्वरूप आज हमें पृथ्वी नीले महासागरों, हरे-भरे जंगलों, घासभूमियों, शुष्क रेगिस्तानों, नमभूमियों, ऊंचें पर्वतों, बर्फ से ढकी ध्रुवीय क्षेत्रों और उस पर जगह-जगह जीवन के विविध रूप से सजी-संवरी मिली है। आज पृथ्वी पर प्रत्येक कोने और किनारों पर जीवन खिलखिला रहा है।

वायुमंडल

वायुमंडल पृथ्वी के वातावरण में उपस्थित एक महत्वपूर्ण अवयव है, जो सूर्य से आने वाली हानिकारक विकिरणों को रोकने और पृथ्वी को गर्म रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पृथ्वी का वातावरण लगभग 480 किलोमीटर मोटा है, लेकिन अधिकतर वायुमंडल (लगभग 80 प्रतिशत) पृथ्वी की सतह से 16 किलोमीटर के अंदर ही स्थित है। अधिकांश व्यक्ति समुद्र तल से तीन किलोमीटर ऊंचाई पर सांस लेने में कठिनाई महसूस करते हैं। पृथ्वी की सतह से लगभग 160 किलोमीटर ऊपर हवा बहुत विरल

होती है, जिससे यहां पर कृत्रिम उपग्रह बिना अधिक प्रतिरोध के घूमते हैं। यद्यपि पृथ्वी का वायुमंडल इसकी सतह से 600 किलोमीटर ऊपर तक चिन्हित किया गया है, फिर भी ऐसा कोई निश्चित स्थान नहीं है जहां वायुमंडल की सीमा का अन्त होता है। वायुमंडल का घनत्व अंतरिक्ष की ओर कम होता जाता है। और अंततः उसी में समा जाता है। बाहरी अंतरिक्ष में यह सीमा वायु के बहुत पतली होने, लगभग निर्वात स्थिति के समीप, तक है।

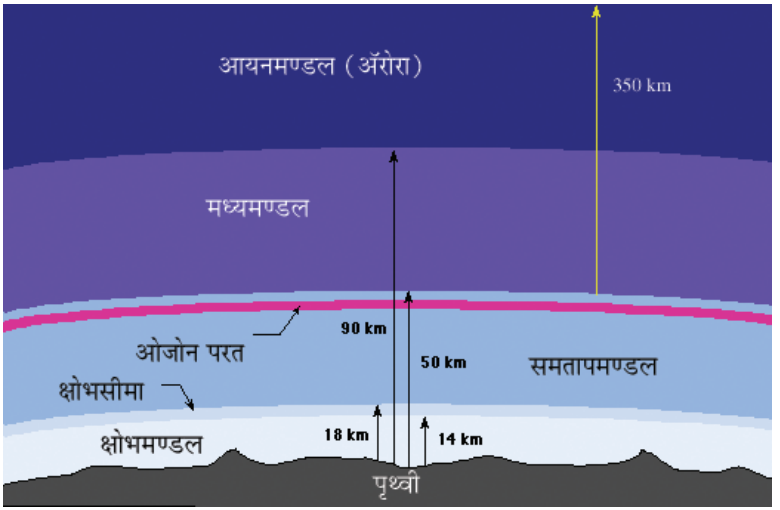

वायुमंडल पृथ्वी के वातावरण का एक बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा है।

पृथ्वी के आरंभिक वायुमंडल का निर्माण इसके आंतरिक भाग में चलने वाली ज्वालामुखीय और अन्य प्रक्रियाओं से उत्पन्न कार्बन डाईआक्साइड, जलवाष्प, सल्फर डाईऑक्साइड और नाइट्रोजन जैसी गैसों से हुआ है। उस समय ऑक्सीजन उपस्थित नहीं थी। वायुमंडल में ऑक्सीजन की उपस्थिति हरे पेड़-पौधों के उद्गम के बाद हुई। हरे पेड़-पौधों प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ऑक्सीजन मुक्त करने लगे थे। पृथ्वी पर आरंभिक जीवन ने वायुमंडल के वर्तमान संघटन को बदल कर उसे आज का स्वरूप प्रदान किया है। वर्तमान में वायुमंडल मुख्यतः नाइट्रोजन (लगभग 78 प्रतिशत), ऑक्सीजन (लगभग 21 प्रतिशत) और अन्य गैसों (लगभग 1 प्रतिशत) से बना है।

ऑक्सीजन सांस लेने के लिए तो आवश्यक है ही साथ ही यह पृथ्वी पर जीवन के पनपने के लिये भी निर्णायक है। ऑक्सीजन ऊपरी वायुमंडल में ओजोन पर्त का निर्माण कर सूर्य से आने वाली हानिकारक पराबैंगनी किरणों के लिए छननी का काम करती है। वायुमंडल पृथ्वी की ऊष्मा को हरित ग्रह प्रभाव द्वारा संरक्षित रख पृथ्वी को गर्म बनाए रखता है। यदि पृथ्वी पर वायुमंडल नहीं होता तब यहां की सतह का औसत तापमान शून्य डिग्री से भी नीचे चला गया होता।

पृथ्वी की सतह से, ऊंचाई के अनुसार तापमान में होने वाले परिवर्तन के अनुसार वायुमंडल को पांच पर्तों में बांटा गया है। वायुमंडल की सबसे निचली पर्त क्षोभमंडल पृथ्वी सतह से लगभग 17 किलोमीटर ऊपर तक फैली हुई है। मौसम संबंधी अधिकतर परिघटनाएं जैसे बादल, वर्षा, तड़ित, तूफान आदि क्षोभमंडल (ट्रोपोस्फियर) कहलाने वाले इसके निचले भाग में ही होती हैं। सामान्यतया इस क्षेत्र में ऊंचाई बढ़ने पर तापमान घटता है। क्षोभमंडल और समतापमंडल (स्ट्रेटोस्फियर) के मध्य का क्षेत्र क्षोभसीमा कहलाता है। इस सीमा क्षेत्र में ऊंचाई बढ़ने पर तापमान में कोई परिवर्तन नहीं होता है।

समतापमंडल की पहचान उस क्षेत्र में ऊंचाई के साथ तापमान बढ़ने और बादलों की अनुपस्थिति से की जाती है। समतापमंडल पर्त पृथ्वी की सतह से 17 से 50 किलोमीटर ऊपर तक फैली होती है। वायुमंडल के इसी भाग में ओजोन पर्त विद्यमान रहती है। ओजोन ऑक्सीजन का एक रूप है, जो जीवन के लिए अतिआवश्यक है। ओजोन पर्त सूर्य से आने वाली पराबैंगनी विकिरणों के लिए छननी का कार्य करती है। समताप मंडल के निचले भाग में केवल पक्षाभ, पक्षाभस्तरी, और पक्षाभकपासी जैसे उच्चस्तरी बादल देखें जा सकते हैं। समताप मंडल पृथ्वी की सतह से 50 से 85 किलोमीटर ऊपर तक फैले हुए मध्यमंडल (मीसोस्फियर) तक वितरित होता है। अस्पष्ट रूप से यह पर्त अधिकतर वायुयानों की अधिकतम ऊंचाई और अन्तरिक्षयानों की निम्नतम ऊंचाई के मध्य स्थित होती है। इस पर्त में ऊंचाई बढ़ने के साथ तापमान तेजी से बढ़ता है। प्रतिदिन लाखों उल्कापिण्ड इस पर्त में गैस कणों से टकराने पर जलकर नष्ट हो जाते हैं। जिसके कारण यहां लोह और अन्य धात्विक अणुओं की अधिकता होती है।

आयनमंडल (आयनोस्फियर) पर्त पृथ्वी की सतह से 70 से 80 किलोमीटर ऊंचाई से लेकर 640 किलोमीटर ऊंचाई तक फैली रहती है। यह पर्त लौह और आयन कहलाने वाले मुक्त आवेशित कणों व मुक्त इलेक्ट्रानों को रखती है। यह पर्त विशेष तरंगदैर्ध्य वाली रेडियो तरंगों को परावर्तित कर देती है। सूर्य से आते प्रकाश के कुछ अणुओं से टकराने पर कुछ इलेक्ट्रानों मुक्त होते हैं। आयनमंडल के कारण ही दीर्घदूरियों की बेतार संचार व्यवस्था संभव हो सकी है। दक्षिण या उत्तर ध्रुवीय ज्योति (अरोरास) आयनमंडल में ही होती हैं।

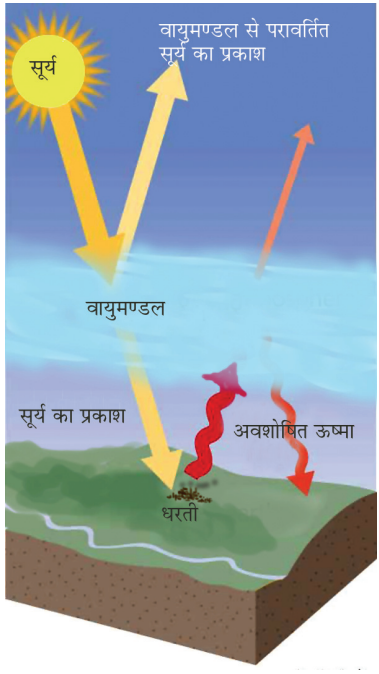

कार्बन डाइऑक्साइड और जलवाष्प द्वारा वायुमंडल में उष्मा को बांधे रखने के कारण हरित गृह प्रभाव उत्पन्न होता है, जो धरती को गर्म रखता है।

पृथ्वी के वायुमंडल की सबसे बाहरी पर्त बाह्यमंडल (एक्सोस्फियर) कहलाती है। यह पर्त करीब 640 किलोमीटर ऊंचाई से आरंभ होकर लगभग 1200 किलोमीटर ऊपर तक होती है। बाह्यमंडल की निम्न सीमा पर वायुमंडलीय दाब (गैसों के कणों के बहुत दूर-दूर बिखरे होने के साथ ही) और तापमान बहुत कम होता है। बाह्यमंडल की मुख्य गैसें हाइड्रोजन और हीलियम जैसी हल्की गैसें हैं।

वायुमंडल पर मंडराता खतरा

यद्यपि हमारे ग्रह पर जीवन के अस्तित्व के लिए वायुमंडल अत्यंत आवश्यक है, लेकिन हमारी कुछ गतिविधियां इसके लिए खतरा उत्पन्न कर रही हैं। औद्योगिक गतिविधियों में जीवाश्म ईंधन के दहन और वाहनों में पेट्रोलियम के उपयोग करने से कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा बढ़ने से वायुमंडल में असंतुलन उत्पन्न होने से हरितग्रह प्रभाव

में वृद्धि हो रही है जिसके कारण पृथ्वी के गर्म होने से वैश्विक मौसम में बदलाव हो रहा है।

अकेले कार्बन डाईआक्साइड के बढ़ने से ही खतरा नहीं है, बल्कि पृथ्वी के ऊपरी वायुमंडल में स्थित सुरक्षात्मक कवच ओजोन-पर्त भी पतली हो रही है। सन् 1930 में क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी) नामक औद्योगिक रसायनों के एक विशिष्ट

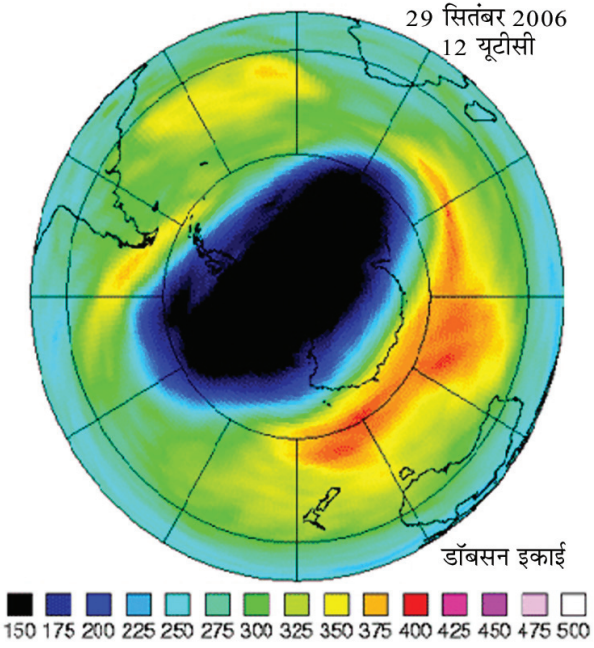

वर्ष 2006 में अंटार्कटिका के ऊपर देखी गई ओजोन पर्त।

वर्ग का विकास किया गया था। क्लोरोफ्लोरोकार्बन का अविषैला, अदहनीय और अन्य रासायनिक यौगिकों के साथ असक्रिय रवैया होने के कारण यह अनेक अनुप्रयोगों जैसे आर्थिक एवं घरेलू रेफ्रिजरेटर इकाईयों, वायुवलय प्रणोदकों और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के स्वच्छताकारक विलायक के रूप में इसका उपयोग किया जाता रहा है। समताप मंडल में ओजोन पर्त के स्तर में कमी होने और अंटार्कटिका के ऊपर सन् 1984 में

ओजोन-छिद्र की पुष्टि हो जाने के बाद से इस प्रक्रिया के लिए क्लोरोफ्लोरोकार्बन को जिम्मेदार ठहराया गया। सौभाग्य से विश्व समुदाय ने तुरन्त इस खतरे को समझ कर क्लोरोफ्लोरोकार्बन के उत्पादन और उपयोग पर प्रतिबंध लगाने की दिशा में कदम उठाने शुरू कर दिये।

जलमंडल

पृथ्वी पर जल की उपस्थिति इसे विशिष्ट ग्रह बनाती है। हमारे ग्रह का विशिष्ट तापमान और यहां तरल जल की उपस्थिति पृथ्वी को अद्वितीय ग्रह बनाती है। यदि पृथ्वी वरुण (नेप्च्यून) ग्रह जितना ठंड ग्रह होता तब यहां उपस्थित जल की समस्त मात्रा जम कर ठोस हो गई होती। दूसरी तरफ, यदि हमारा ग्रह बुध या शुक्र जितना गर्म होता तब यहां का सारा पानी गैसीय अवस्था में रहता। पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीवन के लिए जल की तरल अवस्था जलवाष्प और जल की ठोस अवस्था की अपेक्षा अधिक उपयोगी है।

पृथ्वी की 70 प्रतिशत से अधिक सतह जल के ठोस या तरल अवस्था से ढकी हुई है। महासागरों के अलावा झीलों, झरनों, सतही जल, ग्लेशियरों और ध्रुवीय क्षेत्र में समाहित जल एवं बर्फ और वायुमंडल में उपस्थित जलवाष्प की सम्मिलित मात्रा मिलकर जलमंडल का निर्माण करती है। पृथ्वी के कुछ सतही भाग पर ही शुद्ध पेयजल की मात्रा उपलब्ध है। शुद्धजल की यह मात्रा नदियों, झीलों और भू-जल के रूप में पायी जाती है। भोजन बनाने, खेती करने और धुलाई में जल आवश्यक होता है। यह तो हम जानते ही हैं कि जल के बिना जीवन संभव नहीं है।

जलमंडल का पानी स्थायी न होकर लगातार गतिशील रहता है। सागर और भूमि दोनों से जल वाष्पित होता है। पौधों द्वारा होने वाले वाष्पोसर्जन से भी वायुमंडल में जलवाष्प मुक्त होती है। वायुमंडल की जलवाष्प ठंडी होने पर संघनन द्वारा बादल का निर्माण कर बारिश या हिम के रूप में वापस धरती पर लौट आती है। वर्षा और हिम के पिघलने से धरती से पानी सागरों में पहुंचता है और तब सागरों से पुनः जल-चक्र आरंभ हो जाता है। यद्यपि नदियों, झीलों और वायुमंडल में समाहित जल

की कुल तुलनात्मक मात्रा बारिश द्वारा नदियों-महासागरों-वायुमंडलीय व्यवस्था से गुजरने वाले जल की मात्रा से कम होती है। प्रतिवर्ष धरती से महासागरों में पहुंचने वाले जल की कुल मात्रा किसी भी समय नदियों और झीलों में समाहित कुल मात्रा के लगभग बराबर ही होती है।

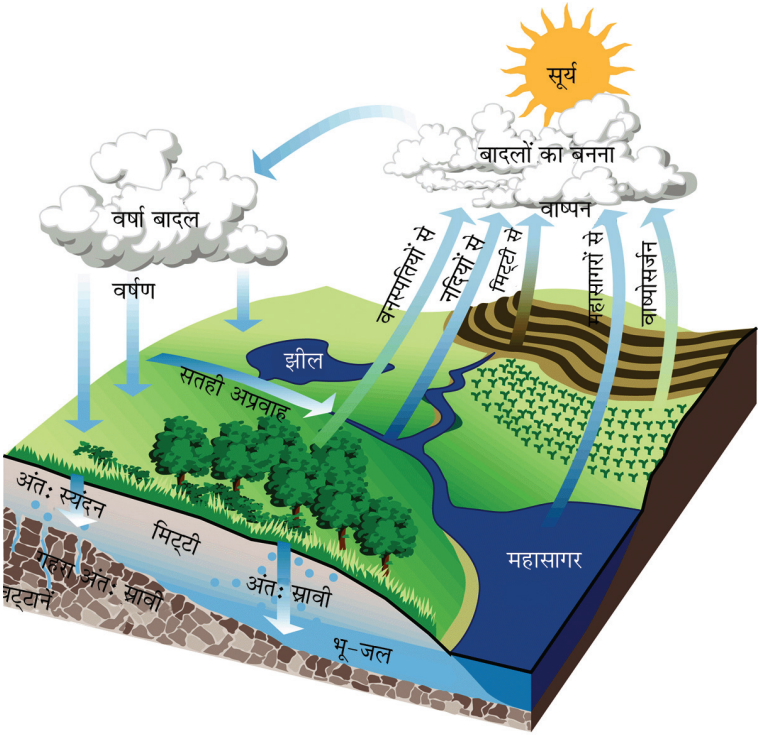

जल-चक्र

जलमंडल में उपस्थित जल अनेक प्रकार से महत्वपूर्ण है। पौधों, जानवरों और मानवों को जीने और अपनी वृद्धि के लिए पानी की आवश्यकता होती है। जल चट्टानों को धीरे-धीरे तोड़ता हुआ मिट्टी का निर्माण करता है। मिट्टी कृषि के लिए आवश्यक है। जल अपने अद्वितीय रासायनिक गुणों के कारण गैसों, लवणों और अनेक कार्बनिक यौगिकों के लिए एक प्रभावी विलायक का कार्य करता है। पानी में धुले विभिन्न पदार्थ और पानह का संवहन एक जटिल प्रक्रिया है जिसके लिये सूर्य तथा

पृथ्वी की आंतरिक ऊर्जा का उपयोग किया जाता है। महासागर और अन्य विशाल जल स्रोत पृथ्वी के मौसम और जलवायु को नियंत्रित करने में भी सहायक होते हैं।

वर्तमान समय में यह महत्वपूर्ण स्रोत मानवीय गतिविधियों से खतरे में है। मानव समाज का लापरवाही युक्त आधुनिक रवैया जल-चक्र पर विपरीत प्रभाव डाल रहा है। विषैले रसायनों, रेडियोसक्रिय अवयवों और अन्य औद्योगिक अपशिष्टों के बिना उपचार के पानी में बहाना व रासायनिक उर्वरकों, शाकनाशियों और जीवमारकों के अविवेकपूर्ण उपयोग के कारण उनके मिट्टी से पानी में रिसने के कारण से सतही और उपसतही जल तंत्र की अवस्था बाधित हुई है। पेट्रोलियम अपशिष्टों के निरावेशन, अव्यवस्थित सीवेज प्रवाह प्रणाली और तापीय प्रदूषण भी जलमंडल की शुद्धता को खतरनाक स्तर तक प्रभावित करते हैं।

स्थलमंडल

पृथ्वी की सतह चट्टानों की पर्तों से बनी है। जैसा हम देखते हैं भूपटल और प्रावार की ऊपरी पर्त मिलकर जिस दृढ़, भुरभुरे क्षेत्र का निर्माण करती है, वह स्थलमंडल कहलाता है। स्थलमंडल की चट्टानें मुख्य रूप से तीन प्रकार की होती हैं - अवसादी, रूपान्तरित और आग्नेय। चट्टानों के यह तीनों प्रकार भूगर्भिय प्रक्रिया द्वारा शैल-चक्र के माध्यम से लगातार चक्रित होते रहते हैं। यह प्रक्रिया तापमान, दबाव, समय तथा पृथ्वी के भूपटल और उसकी सतह पर हुए वातावरणीय परिवर्तनों पर निर्भर करती है।

शैल-चक्र निरन्तर चलने वाली एक प्रक्रिया है जो विवर्तनिक बलों से आरंभ होकर हवा और वर्षा द्वारा चट्टानों के क्षय होने तक चलती रहती है। मौसमी बल से भी चट्टानें छोटे कणों में टूटकर हवा और पानी से कहीं दूर तक ले जाती हैं। ये छोटे टुकड़ें अक्सर उथले सागर और झीलों के किनारों पर जमा होते हैं। लाखों वर्षों के बाद जब इन ढेरों की पर्तें जमा होती जाती हैं, तब इस दौरान अवसादों के वजन के कारण निचली पर्त ठोस शैल में बदल जाती हैं। इस प्रकार अवसादों से जमा यह चट्टानें

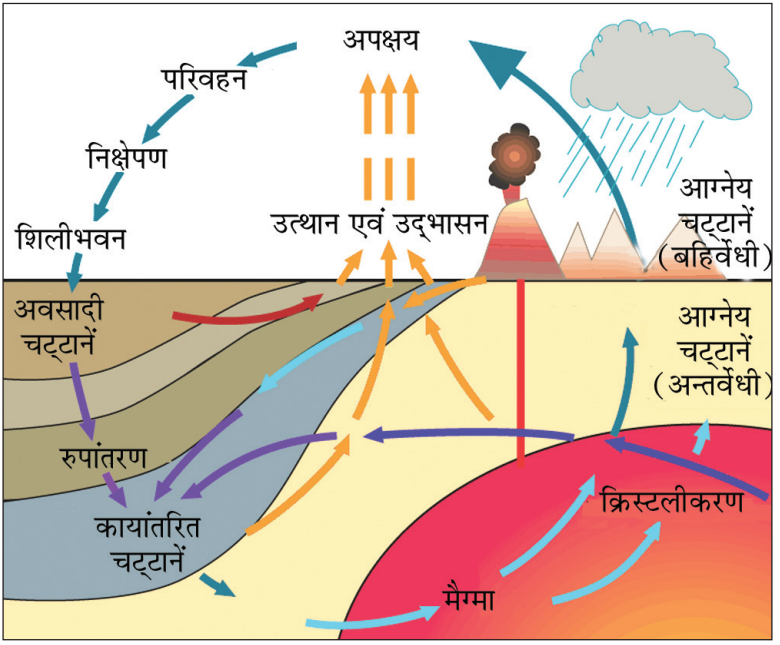

शैल-चक्र द्वारा विभिन्न प्रकार की शैलों का निर्माण, परिवर्तन, क्षय और पुनःआकार निर्धारित होता है।

अवसादी चट्टानें कहलाती हैं। रेतीले कण बलुआ पत्थर में भी परिवर्तित हो सकती है, गाद (स्लिट) और चिकनी मिट्टी के कण स्लेटी पत्थर में बदल जाती है। अवसादी चट्टानों में ही अधिकतर जीवाश्म मिलते हैं।

पृथ्वी का तीन चौथाई क्षेत्र जिसमें अधिकतर महासागरीय तल शामिल है, अवसादी चट्टानों से ढ़का है। यदि पृथ्वी की भूपटल पर्त विकृत या क्षरित होती है तब वहां से अवसादी चट्टानों का विशाल क्षेत्र उजागर हो जाता है। कुछ स्थानों जैसे नदियों के मुहानों पर अवसादी चट्टानों की पर्त करीब 12,000 मीटर मोटी हो सकती है।

कायांतरित (या रूपांतरित) चट्टानें ऐसी चट्टानें हैं जो पृथ्वी के अंदर ऊष्मा और दाब के कारण बिना पिघले ही रूप बदल लेती हैं। चट्टानों में जब परिवर्तन होता

दिल्ली के लाल किले का यह बलुआ पत्थर अवसादी शैल से बना है।

है तब पर्वतों या भवनों द्वारा बहुत अधिक दबाव और ऊष्मा उन पर आरोपित की जाती है। जब रासायनिक एवं भौतिक परिवर्तन द्वारा भूपटल में दबी ठोस चट्टानों की संरचना में परिवर्तन होने के साथ इन चट्टानों में खनिजों की मात्रा भी बदल जाती हैं, तब भी कायांतरित चट्टानों का निर्माण होता है। चट्टानों के कुछ खनिज टूटकर अलग

आगरे के ताजमहल का संगमरमर कायांतरित शैलों से बना है।

हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप नए खनिजों का निर्माणहोतो है। संगमरमर, नाइस और स्लेट चट्टानें कायांतरित चट्टानों का उदाहरण है।

आग्नेय (इग्नियस) चट्टानों का निर्माण पृथ्वी के अंदर गहराई में उपस्थित पिघले पदार्थों के क्रिस्टलीय और कठोर होने पर होता हैं। 'इग्नियस' शब्द की उत्पत्ति

ग्रीक भाषा के अग्नि शब्द से हुई है। आग्नेय चट्टानें मैग्मा (पृथ्वी के भूपटल के नीचे का गर्म तरल पदार्थ) का कठोर रूप हैं। ग्रेनाइट पृथ्वी के भूपटल की मुख्य चट्टानों में प्रचर है। जो मुख्य रूप से महाद्वीपीय भूपटल का निर्माण करती हैं। ये खुरदर, दानेदार चट्टानें हैं जो मैग्मा के ठंडे होने से बनती है। ग्रेनाइट का उपयोग प्राचीन समय से भवन निर्माण में किया जाता रहा है। भारत के अनेक हिन्दू और बौद्ध मन्दिर ग्रेनाइट

औरंगाबाद में एलोरा मंदिर की ग्रेनाइट शैलें आग्नेय शैलों को काटकर बनाई गई हैं।

से बने हैं। ग्रेनाइट के अधिक स्थायी होने के कारण आधुनिक समय में सार्वजनिक और व्यवसायिक इमारतों व स्मारकों में फर्श पर 'टाईलस्' गलीचे लगाने में इसको उपयोग में लाया जाता है। विश्व में अम्लीय वर्षा के बढ़ने पर स्मारकों के निर्माण के लिए संगमरगर के स्थान पर ग्रेनाइट का उपयोग किया जाने लगा है। अधिक टिकाऊपन और सुंदर होने के कारण रसोईघर में घिसाई किया हुआ ग्रेनाइट पत्थर का उपयोग अधिक किया जाने लगा है।

पर्वत चोटियों पर वनों के विनाश और गैरकानूनी खनन के परिणामस्वरूप अक्सर भूस्खलन होते रहते हैं।

भारत में बलुआ पत्थर, ग्रेनाइट और संगमरमर का उत्खनन वातावरण के लिए अक्सर गंभीर खतरा बनते देखा गया है। भारत के अनेक क्षेत्रों में उत्खनन के भयानक परिणाम देखे गए हैं। अक्सर उत्खनन कार्यों से वन क्षेत्र में कमी आने से मिट्टी की ऊपरी पर्त के क्षरण से पहाड़ी क्षेत्रों में ढलानों पर अस्थायित्व के कारण भूस्खलन की घटनाएं बार-बार घटित होती हैं। अवैज्ञानिक ढ़ंग से किया गया उत्खनन भूजल स्रोत को भी प्रभावित करता है जिसके कारण उस क्षेत्र के आसपास स्थित कुएं और नलकूप सूखने लगते हैं।

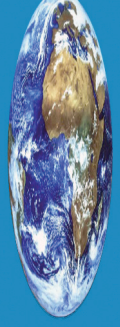

5

जीवन का उदय

पृथ्वी हमारे सौरमंडल का अकेला ऐसा ग्रह है, जहां जीवन के असंख्य रूप हैं। किंतु पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति अभी तक रहस्यमयी है। हम यह जानते हैं कि आरंभिक पृथ्वी बहुत गर्म थी और यहां का वातावरण विषैली गैसों से भरा हुआ था। हालांकि अभी तक जीवन से संबंधित कई सवालों को सुलझाया नहीं जा सका है; जैसे पृथ्वी पर आरंभिक जीव कब और कहां पनपा? यह जीव कैसा था? यद्यपि पहले जीव के प्रकट होने का वास्तविक समय एकदम सही ज्ञात नहीं किया जा सकता लेकिन फिर भी इस बात के प्रमाण मिले हैं कि पृथ्वी पर करीब 3.5 अरब वर्ष पहले बैक्टीरिया जैसे जीव थे। यह भी संभव है कि करीब 4 अरब वर्ष पहले जब पहली ठोस भूपटल पर्त का निर्माण हुआ था, तब भी जीवन किसी अन्य रूप में उपस्थित हो। आरंभिक जीवों के वर्तमान जीवों से सरल होने की संभावना व्यक्त की जाती रही है। पृथ्वी पर आरंभिक जीवन के बारे में आज हम जो भी जानते हैं उसकी जानकारी हमें जीवाश्मों के अध्ययन से मिलती है। जीवाश्म लाखों-करोड़ों वर्षों पहले अवसादी चट्टानों के नीचे दबे जीवों के अवशेष या उसके चिन्ह हैं।

पृथ्वी पर आरंभिक जीवन कैसे पनपा उसे जानने के लिए हम इतिहास में तो नही जा सकते हैं, लेकिन वैज्ञानिक अभिनव प्रयोगों द्वारा यह जानने में लगे हुए हैं कि पहली जीवित कोशिका की उत्पत्ति कैसे हुई। पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति संबंधी

एक सिद्धांत के अनुसार पहली जीवित कोशिका की उत्पत्ति आदि-महासागर में तडित् झंझा के कारण हुई। सन् 1953 में शिकागो विश्वविद्यालय में कार्यरत स्टेनली एल. मिलर और हार्लोड सी. यूरी द्वारा किए गए एक प्रयोग ने जीवन की उत्पत्ति संबंधी वैज्ञानिक खोजों को एक नई दिशा दी। मिलर ने ऐसा अणु लिये जिनके बारे में यह धारणा थी कि ये आरंभिक पृथ्वी के वायुमंडल में उपस्थित मुख्य तत्वों का प्रतिनिधित्व करते थे, उसने इन अणुओं को बंद उपकरण में रखा। उन्होंने इस प्रयोग के लिए मिथेन (CH_4), अमोनिया (NH_3), हाइड्रोजन (H_2) गैसों और जल (H_2O) को लिया। इसके बाद उसने उपकरण में लगातार विद्युत् प्रवाहित कर आरंभिक पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाले विद्युत् आवेश वाला तूफान उत्पन्न किया। एक सप्ताह के बाद मिलर ने देखा कि 10 से 15 प्रतिशत कार्बन अब कार्बनिक यौगिकों में बदल गया था, जिसका क्रोमेटोग्राफी द्वारा परीक्षण किया गया था। मिलर के प्रयोग द्वारा यह बताया जा सका कि पृथ्वी की आरंभिक परिस्थिति में कोशिकीय जीवन के लिए आवश्यक अमीनो अम्ल जैसे कार्बनिक यौगिकों को बनाना संभव था।

लेकिन मिलर के प्रयोग की सत्यता के बारे में कुछ आपत्तियां हैं क्योंकि अब विश्वास किया जाता है कि पृथ्वी के आरंभिक वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड महत्वपूर्ण अवयव के रूप में थी, जिसकी ओर मिलर ने कोई ध्यान नहीं दिया था। इस प्रयोग को लेकर दूसरी आपत्ति संदेह इस प्रयोग के लिए विशाल मात्रा में ऊर्जा की आवश्यकता है। जबकि यह माना जाता है कि आरंभिक पृथ्वी पर विद्युत् तूफान सामान्य परिघटना थी, परंतु वैसी लगातार नहीं थी जिस प्रकार मिलर मिलर और यूरी ने अपने प्रयोग में लगातार करीं थी। इस बात को लेकर भी बहस है कि अमीनो अम्ल और अन्य कार्बनिक यौगिक जिस मात्रा में बने थे, क्या वैसे ही वे प्रयोग के दौरान उस अनुपात में निर्मित नहीं हुए थे।

पानी के गर्म स्रोतों में जीवन की उत्पत्ति

वर्तमान में अनेक वैज्ञानिकों का यह मत है कि पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति इसकी सतह पर न होकर गहरे महासागरीय, उष्णजलीय विवरों में हुई है। इन अंधःसागरीय गर्म उष्णोत्स की संरचना लगभग 55 मीटर लंबी चिमनी जैसी होती है। इनकी प्रथम

खोज सन् 1979 में की गई थी। उष्णजलीय-विवर महासागर के नीचे तली की सतह की ओर गर्म व खनिजीयुक्त पानी के विसर्जन को व्यक्त करते हैं। ये मध्य-महासागरीय कटक के पास स्थित है। यह माना जाता है कि कटक के पास के गर्म और नए बने महासागरीय स्थलमंडल से जल गर्म हो जाता है।

वर्तमान में अनेक वैज्ञानिकों का विचार है कि पृथ्वी पर जीवन का आरंभ इसकी सतह पर न होकर समुद्र की गहराई में उष्णजलीय विवर के आस-पास हुआ है।

पृथ्वी के अंदर जहां तापमान करीब 300 डिग्री सेल्सियस होता है, जो जीवन के प्रतिकूल होता है, वहां उष्णजलीय विवरों द्वारा पृथ्वी के अंदर से हाइड्रोजन सल्फाइड जैसी गर्म गैसें और खनिज समृद्ध जल निकलते देखा गया है। वैज्ञानिकों को इन स्थानों

पर जहां सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंचता वहां इन छिद्रों के आसपास के पारिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न प्रकार की मछलियों, कीड़ों, केकड़ों, जीवाणुओं और अन्य जीवों के मिलने पर आश्चर्य प्रकट हुआ है। पहले जिन क्षेत्रों में जीवन को असंभव माना गया था आज वहां जीवन पाया देखकर विज्ञानिकों ने एक और बात पर विचार करना आरंभ कर दिया है कि हो सकता है जीवन का उद्भव शायद ऐसे स्थान पर ही हुआ हो।

उनके पास इस धारणा की स्वीकार करने के कुछ कारण हैं। अंधसागरीय छिद्रों के आसपास ताप और पीएच मान ने शायद जीवन के लिए ऊर्जा प्रदान की हो एवं इन छिद्रों से निकलने वाले जल में घुले खनिजो ने पहले कोशिकीय जीवों को आकार दिया हो। प्रयोगशाला में प्रयोग द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि समुद्रतलीय गर्म स्रोतों के आसपास मिलने वाले आयरन सल्फाइड आरंभिक अवस्था में अर्द्धतरल अवस्था में छिद्र और बुलबुले के साथ जमने लगा है। इस अर्द्धतरल पदार्थ में उपस्थित छिद्र व बुलबूले रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए बंद स्थान उपलब्ध कराता है। प्रत्येक बुलबुले के छोटे आयतन ने जीवित कोशिकाओं में चलने वाली जटिल अभिक्रियाओं के समान क्रियाओं को प्रोत्साहित किया होगा। अतः यहां भी जीवन के उद्गम की पूरी संभावना है।

यदि जीवन का उद्भव उष्णजलीय विवरों में हुआ था, तब इस घटना का क्रम शायद निम्न प्रकार से होगा। उष्णजलीय विवरों के आसपास गर्म पानी एवं पृथ्वी के भूपटल से निकले तत्वों और ज्वालामुखी गैसें ने क्रिया कर एसीटिक अम्ल का निर्माण किया होगा, इसमें अतिरिक्त कार्बन के मिलने के कारण पाइरुविक अम्ल बना होगा। जब पाइरुविक अम्ल ने अमोनिया से अभिक्रिया की होगी तब अमीनो एसीड बना होगा जिसने प्रोटीनों के मध्य एक कड़ी की भूमिका निभाई होगी।

यह महज अटकलबाजी नहीं थी क्योंकि अधिकतर परिकल्पनाओं को अमेरिका के कार्नेजिया संस्थान के खोजकर्ताओं ने 1998-99 की अवधि के दौरान प्रयोगों की एक कड़ी के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने उष्णजलीय विवर की कठोर परिस्थितियों को दोहराया और इस प्रकार पाइरुविक अम्ल प्राप्त हुआ जो कोशिकीय उपापचय के लिए

एक महत्वपूर्ण कार्बनिक रसायन है। शोधकर्ताओं ने आयरन सल्फाइड (पृथ्वी के भूपटल का एक तत्व) फार्मिक अम्ल (उष्णीय विवरों में आज भी देखा जाता है) और एल्किल थायोल (एल्कोहल के समान सल्फेरस का एक यौगिक जो आयरन सल्फाइड और कार्बन मोनोऑक्साइड के संयोग से बनता है) यह रसायन सोने की धातु के एक छोटे कोष्ठ में रख कर उन्हें उच्च ताप एवं दाब दिया गया यानी उष्णजलीय विवर पर पाए जाने वाली परिस्थितियां पैदा की गई।

पृथ्वी पर आरंभिक जीवित कोशिका अंतः समुद्री उष्णजलीय विवर के आसपास जन्मी होगी तो भी उनके लिये स्थितियां विपरीत ही थी। आरंभिक समय में गहरे समुद्र से खुले समुद्र में आने वाली बहुत कम जीवित कोशिकाएं जीवित रह सकी होंगी। क्योंकि उस समय महासागरों में तेजाब के कटोरे थे और फिर सुर्य से आती पराबैंगनी विकिरण भी जीवन के लिए खतरा उपल्न कर रही थी। ऐसे में अधिकतर कोशिकाएं समुदी तल और विवर के आसपास स्थित अवसाद में ही सुरक्षित थी। वे हाइड्रोजन एवं कार्बन डाइऑक्साइड के अल्प आहार पर जीवित रहते थे जिसकी उन्हें लगातार पर्याप्त मात्रा मिलती रहती थी

पहले आद्य जीव लाखों वर्षों तक महासागरीय तल में ही रहे होंगे। पृथ्वी के प्रावार में होने वाली विवर्तनिक गति या चट्टानों की हलचल द्वारा इन आरंभिक जीवित कोशिकाओं की कुछ बस्तियां सतह पर स्थानांतरित हो गई होंगी। तो कुछ ऐसी गहराई पर व्यवस्थित हो गई होंगी जरे इतना तो गहरा होगा कि उनका बचाव हानिकारक किरणों से हो सके परंतु उस स्थान पर उनके लिये दीर्घ तरंगदैर्ध्य वाली विकिरणों का उपयोग कर और अधिक कार्बनअणुओं का निर्माण करना संभव न हो सका होगा। शायद इसी प्रकार पृथ्वी पर प्रथम जीव संभवतः जीवाणु ने, अपने पैर पसारे होंगे और कुछ समय बाद इस ग्रह को जीवित ग्रह बनाया होगा।

पेनस्परमिया सिद्धांत

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति संबंधी सभी विचार सैद्धान्तिक हैं। इसी प्रकार एक अन्य विचार के अनुसार पृथ्वी पर जीवन के बीज धूमकेतुओं एवं क्षुद्र ग्रह जैसे बाहरी पिण्डों

द्वारा लाए गए होंगे। इस सिद्धांत के प्रबल प्रस्तावकों को सामान्यतया 'पेनस्परमिया' नाम से जाना जाता है, जो खगोलभौतिकविद् फ्रेड हायल और श्री लंका में जन्में चंद्रा विक्रमसिन्घे हैं। पेनस्परमिया सिद्धांत जीवन की उत्पत्ति संबंधी पहेली का उत्तर नहीं दे पाए की जीवन की उत्पत्ति कैसे हुई। उन्होंने केवल उत्पत्ति के स्थान को बदल दिया। हालांकि वर्तमान में कुछ वैज्ञानिक इस सिद्धांत का समर्थन करते हैं।

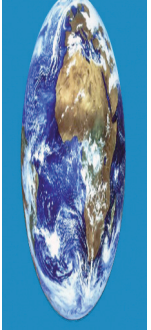

6

जीवन तेरे रूप अनेक

करीब 3.5 अरब वर्ष पूर्व पृथ्वी के महासागरों में एककोशीय जीव 'प्रोकैरियोट' बसता था। यह जीवन का आरंभिक रूप था जो झिल्ली परिबद्ध नाभिक या झिल्ली परिबद्ध कोशिकांग में विभक्त नहीं किया जा सकता है। प्रोकैरियोट कोशिकाओं में डीएनए गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) पर व्यवस्थित नहीं होते। यह जीव आज के बैक्टीरिया और सायनोबैक्टीरिया का पूर्वज था। समय बीतने पर जीवन के अन्य रूप विकसित होते गए और आज विश्व के प्रत्येक कोने और किनारे पर जीवन है। समुद्र के गहरे तल में या गर्म रेगिस्तान या पर्वत की ठंडी चोटी और वायुमंडल में कुछ किलोमीटर तक यानी सभी ओर जीवन को देखा जा सकता है। पृथ्वी पर जीवन के लाखों रूप हैं, जिन्हें प्रजातियां कहते हैं। वैज्ञानिक यह मानते हैं कि अभी भी अनेक प्रजातियों को खोजा जाना बाकी है। इस प्रकार पृथ्वी पर जीवन के विभिन्न रूप मिलकर जैवमंडल का निर्माण करते हैं।

ऑक्सीजन प्रदाता

पृथ्वी के आरंभिक वायुमंडल में ऑक्सीजन नहीं थी। यह वातावरण में 'नीले-हरे शैवाल' कहलाने वाले सायनोबैक्टीरिया जीवों की उत्पत्ति के बाद आई। जब पृथ्वी के महासागरों में नीले-हरे शैवाल बढ़ने लगे तब उन्होंने वायुमंडल को ऑक्सीजन से भरना आरंभ किया। नीले-हरे शैवालों द्वारा उत्पन्न ऑक्सीजन से अन्य प्रकार के जीवों का

विकास होना संभव हो पाया। पृथ्वी के आरंभिक कार्बन डाइऑक्साइड समृद्ध वायुमंडल को वर्तमान के ऑक्सीजन समृद्ध वायुमंडल जैसी अवस्था में परिवर्तित होने में व जीवों द्वारा प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया आरंभ करने में 30 करोड़ वर्ष लगे।

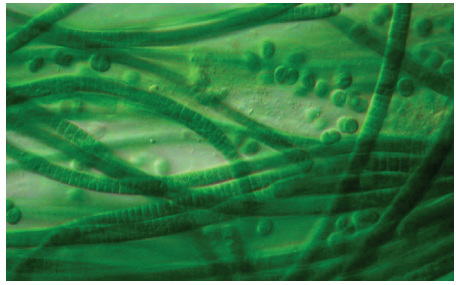

सायनोबैक्टीरिया या नीला-हरा शैवाल प्रकाशसंश्लेषण का उपयोग कर ऑक्सीजन मुक्त करने

जब वायुमंडल में ऑक्सीजन का स्तर बढ़ने लगा, तब 'यूकैरियोट' नामक जीव पनपे। यह जीव 'प्रोकैरियोट' जीवों से भिन्न थे, इनमें गुणसूत्रों के साथ केन्द्रीय नाभिक और केन्द्रक झिल्ली पाई जाती थी। क्रमशः 50 करोड़ वर्ष पूर्व बहुकेन्द्रकीय जीवों की संख्या में अचानक बढ़ोत्तरी होने लगी। महासागरों में बहुत से जीवों जैसे जेलीफिश, वार्मस, ट्राइलोबाइटा मोलास्क के साथ सर्पिल कवच, स्टारफिश, समुद्री अर्चिन, घोंघा, स्पंज, कोरल और ज्वॉलेश मछली आदि का प्रचुर मात्रा में उद्‌भव हुआ और करीब 43.5 करोड़ वर्ष पहले महासागरों में आरंभिक कशेरुकी जीव प्रकट हुआ। कशेरुकी जीवों में खंडों में बंटा मेरुदंड और खोपड़ी से ढका मस्तिष्क होता है तथा अस्थियों या उपास्थियों युक्त कंकाल होता है। 43.0 करोड़ वर्ष पहले धरती पर प्रकट होने वाले आरंभिक जीवन में पौधों और कीटों में मकड़ी, दीमक, उभयचरों के साथ 'सिनैप्सिडा' का

ट्राइलोबाइटा जीवाश्म। ट्राइलोबाइस पृथ्वी का आरंभिक बहुकोशिकीय जीव था जिनका शरीर तीन खड़े लोलकी खाँचेदार भागों में बंटा हुआ था।

एक समूह प्रकट हुआ जिन्हें अक्सर स्तनधारी जैसे दिखने वाले सरीसृप कहा जाता है जो कुत्ते और छिपकली के संकरित जीव सदृश्य दिखते हैं। यह सिनैप्सिडा पृथ्वी पर राज करने वाले पहले मेरुदंडी जीव थे। वास्तविकसरीसृप करीब 30 करोड़ वर्ष पूर्व धरती पर प्रकट हुए थे।

जीवों की प्रजातियों का फैलाव लगातार नहीं हुआ। पृथ्वी के लंबे इतिहास में अनेक बार कई प्रजातियां वृहद विनाश (मॉस एक्टिशंन) द्वारा समाप्त हो गईं। करीब 25 से 29 करोड़ वर्ष पूर्व घटित वृहद विनाश की घटना से करीब 90 प्रतिशत समुद्री प्रजातियां और 70 प्रतिशत भू-प्रजातियां खत्म हो गई थीं। उस समय शैलफिश, कोरल, फिनॉयड, ब्रैकियोपॉड, ब्रायोज़ोआन और मछलियों की अनेक प्रजातियां विलुप्त हो गई थीं। यह ज्ञात नहीं है कि वृहद विनाश की घटना क्यों घटित हुई, किंतु जीवाश्मों के अध्ययन से यह पता लगता है कि इस वृहद विनाश की अवधि छोटे अंतराल से लेकर कुछ लाख वर्षों तक हो सकती है।

डायनासोरस का युग

पृथ्वी पर जीवन को पुनः संवरने में लाखों वर्ष लगे। करीब 24 करोड़ वर्ष पूर्व डायनासोरों का उद्भव हुआ। ये सरीसृप थे और उनमें से अधिकतर अंडों से उत्पन्न हुए थे। इचियोसोरस और प्लीसिओसॉरस जैसे छोटे डायनासोर मछली खाते थे। जब शार्क और 'रे' जैसी बड़ी मछलियां लगातार विकसित हो रही थीं तब धरती पर पहला स्तनधारी प्रकट हुआ। करीब 15 करोड़ वर्ष पूर्व विशाल डायनासोर और टेरोसौरस जिसे उड़ने वाला सबसे पुराना पक्षी कहा जाता है, प्रकट हुए। स्किवड, मेढ़क और कछुए भी इसी दौरान प्रकट हुए।

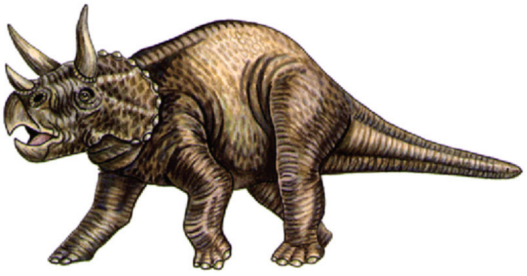

एक ट्राइसिरैटाप्स

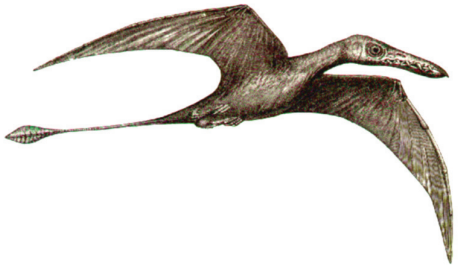

करीब 15 करोड़ वर्ष पहले पाया जाने वाला उड़ने वाला टेरोसौरास।

डायनासोर नाम का अर्थ 'बहुत भयानक छिपकली' है। फिर भी डायनासोर छिपकली नहीं थे, यद्यपि उनसे संबंधित जरूर थे। कुछ वैज्ञानिक सोचते थे कि डायनासोर पक्षियों के अधिक निकट थे। डायनासोरों ने धरती पर 17 करोड़ सालों तक राज किया। वे विभिन्न आवासों, जिनमें खुले मैदानों से जंगलों, दलदलों के किनारों, झीलों और समुद्रों तक शामिल थे, में रहते थे। कुछ डायनासोर पांच मंजिला भवन जितने ऊंचे थे और कुछ चूजे जितने बड़े भी ना थे। तब सबसे छोटे और सबसे ऊंचे डायनासोर के मध्य सभी आकार और स्वरूपों के डायनासोरों का अस्तित्व था। सबसे विशाल डायानासोर 45 मीटर लंबा और 77 टन वजनी था। इनकी चीमड़ त्वचा परतों से ढकी थी जिस पर नुकिले कांटे भी होते थे।

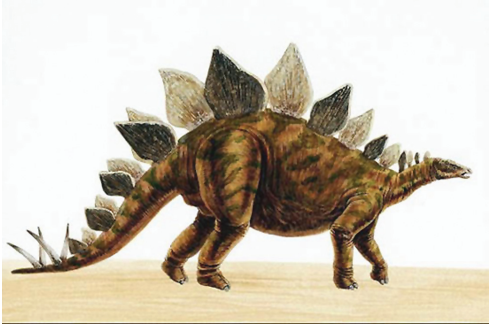

स्टेगोसौरस नुकीले कवच वाला डायनासोर था।

कुछ डायानासोर मांसाहारी थे। जिनके तेज नुकीले दांत और जबड़े होते थे। टिरैनोसोरस रेक्स, ऐलोसौरस और बैरिऑनायेस मांसाहारी थे। फिर भी अधिकतर डायनासोर शाकभक्षी थे, जो पौधों को खाते थे। उनके दांत भोजन को पीसने वाली संरचना लिए थे। उनमें मांसाहारियों की तुलना में बड़ी आंत होती थी क्योंकि पौधों में मांस की तुलना में कम पोषक तत्व होते हैं, इसलिए उन्हें अधिक मात्रा में भोजन

करना होता था। उनके आकार और टिरेनोसोरस रेक्स जैसी प्रजातियों की परभक्षी प्रवृत्ति के कारण धरती पर कुछ अन्य प्रजातियां भी प्रचुर मात्रा में पनपने लगी थीं।

टाइनोसोरस रेक्स के तीक्ष्ण दांत थे और ये मांसाहारी थे।

किंतु डायानासोरों को प्रकृति के क्रोध का सामना करना पड़ा और वह पृथ्वी से एक ही झटके में समाप्त हो गए। यह घटना करीब 6.5 करोड़ वर्ष पहले घटी। यह माना जाता है कि उस समय पृथ्वी से एक विशाल उल्कापिण्ड टकराने के कारण धरती से उठे

करीब 6.5 करोड़ वर्ष पहले पृथ्वी से विशाल उल्का के टकराने पर डायनासौरों का यहां से सफाया हो गया। उल्का की टकराहट से धूल के विशाल बादलों द्वारा सूर्य से आने वाली किरणों के धरती पर नहीं पहुंच पाने के कारण कई वर्षों तक अंधेरा छाने के साथ यहां तापमान बहुत कम हो गया था।

धूल के विशाल बादलों ने सूर्य से आने वाली किरणों को रोक दिया जिसके परिणामस्वरूप कई वर्षों तक पृथ्वी पर अंधेरा और ठंड रही और इस दौरान विशाल ज्वारीय तरंगों से निचली भूमि पर बाढ़ आने और अम्लीय वर्षा की घटनाएं भी होती रही थीं। इन विषम परिस्थितियों में शायद छोटे जीवों को तो आवास मिलने के साथ पर्याप्त गर्मी और भोजन की पूर्ति होती रही होगी किंतु डायानासोरों के लिए यह संभव नही हो पाया होगा, जिससे डायानासोर का अंत हो गया होगा।

स्तनधारी जीवों का युग

स्तनधारी करीब 19 करोड़ वर्ष पहले प्रकट हुए और करीब 6.5 करोड़ वर्ष पहले डायनासोरों की समप्ति के बाद पृथ्वी पर प्रमुख जीव बन गए। स्तनधारी गर्म रक्त वाले एवं शरीर पर रोयेंदार आवरण रखने वाले जीव थे, जो मेरुदण्ड के साथ चार हृदय कोष्ठ और श्वसन में सहायक मध्यपट को रखते हैं। अधिकतर स्तनधारी अंडे देने के बजाय बच्चे पैदा करते थे और सभी स्तनधारी अपने छोटे बच्चों को दूध पिलाते थे। बच्चों को दुग्धपान कराने के लिए इस वर्ग के जीवों में स्तन ग्रंथि होती है, जो इस वर्ग की विशिष्टता भी है।

डायनासोरों की समाप्ति के बाद स्तनधारी जीव लगभग विशाल, खूंखार और प्रधान परभक्षी बन गए थे। स्तनधारियों ने शीध्र ही पारिस्थितिकी तंत्र में डायनासोर द्वारा रिक्त हुए स्थान पर कब्जा जमा लिया। उड़ने वाले स्तनधारियों ने उड़ने वाले सरीसृपों का, तैरने वाले स्तनधारियों ने तैरने वाले सरीसृपों का स्थान हथिया लिया। डायनासोरों की मृत्यु के करीब एक करोड़ वर्ष बाद पृथ्वी कुतरने वाले (रोडैंट) स्तनधारी जीवों से भर गई। मध्यआकार के स्तनधारी जीव जंगलों में चरते थे तो बड़े मांसाहारी जीव दूसरे स्तनधारियों, पक्षियों और सरीसृपों का शिकार करते थे।

करीब 3.5 करोड़ वर्ष पहले स्तनधारियों का नया वर्ग प्रकट हुआ। वे विषम-पादांगुली खुर वाले जीव, जो वर्तमान घोड़ों, गैंड़ों और टैपीशा के पूर्वज, थे और

इनके साथ सम-पादांगुली खुर वाले जीव, जिनमें हिरण, मवेशी और भेड़ के पूर्वज भी अस्तित्व में आए। इसी समय के आसपास ही दो जलीय स्तनधारी समूह विकसित हुए थे। पहले समूह तिमिगण के अन्तर्गत व्हेल, सूँस और डॉल्फिल शामिल थे। दूसरे समूह में आधुनिक मैनेटी और समुद्री गाय के पूर्वज विकसित हो रहे थे। इसी काल में पहली बार हाथी जैसा जीव और चमगादड़ प्रकट हुए।

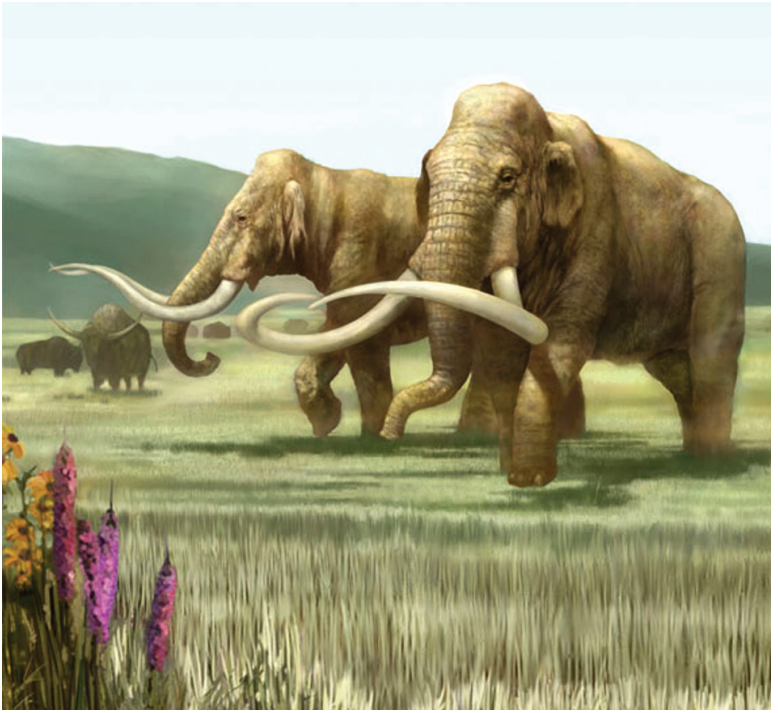

करीब 0.18 करोड़ वर्ष पहले यूरेशिया के उत्तर-मध्य में घने बालों से युक्त मैमथ का उद्‌गम हुआ था।

करीब 3.5 करोड़ से 2.4 करोड़ वर्ष पहले हाथी, बिल्ली और कुत्ते, बंदर एवं महान कपियों ने धरती पर राज किया। अगले 1.5 करोड़ वर्षों के दौरान बड़े कपि पर्यटक बनकर अफ्रीका और दक्षिण यूरोप में पहुंचे। करीब 50 लाख वर्ष पहले

औस्ट्रालोपिथेसिनस, वर्तमान मानवों के पूर्वज से भिन्न और कपियों एवं मानवों से समानता दर्शाने वाले जीव दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका में प्रकट हुआ।

करीब 18 लाख वर्ष पहले शायद उत्तर केन्द्रीय यूरेशिया में मैमथ उत्पन्न हुआ जो पश्चिम की ओर ब्रिटेन व स्पेन और पूर्व से होकर बेरिंग इस्थमथ से दक्षिण टुंड्रा समान क्षेत्रों उत्तरी अमेरिका से अटलांटिक के तटीय क्षेत्रों और अलास्का की ओर गया। हम इनकी उपस्थिति के बारे में साइबेरिया की भूमि में जमे अनेक परिरक्षित शवों और पुरापाषाणी कलाकारों द्वारा बनाई गई चित्रकारी के विस्तृत अध्ययन से जानते हैं। यह समय आधुनिक मानवों की अफ्रीका में उत्पत्ति के समय से पहले का था।

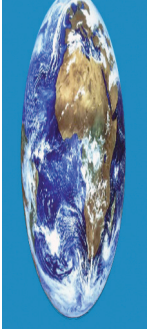

7

हरियाली की चादर

यह कोई नहीं जानता कि आरंभिक जीव यानी एककोशिकीय बैक्टीरिया ने कब सूर्य के प्रकाश का उपयोग कर हरे पौधों के समान भोजन बनाना आरंभ किया। क्लोरोफिल यानी हरितवर्णक ने वायुमंडल में ऑक्सीजन की मुक्त अवस्था के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जीवाश्मों के अध्ययन से यह पता चला है कि करीब साढ़ें तीन अरब वर्ष पहले सर्वप्रथम हरतिवर्णक का उपयोग करने वाले जीव नीले-हरे शैवाल के नाम से प्रसिद्ध सायनोबैक्टीरिया था। यद्यपि नीले-हरे शैवाल कहलाने वाला सायनोबैक्टीरिया शैवाल नहीं था, लेकिन यह प्रकाश संश्लेषण द्वारा स्वयं अपना भोजन बनाने वाला पहला जीव था, जो अपशिष्ट उत्पाद के रूप में ऑक्सीजन मुक्त करता था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सायनोबैक्टीरिया वास्तव में पौधा नहीं था लेकिन यह पृथ्वी पर प्रकट होने वाले पौधे जैसा पहला जीव था।

करीब 3.0 से 3.5 अरब वर्ष पुराना स्ट्रोमैटोलाइट नामक जीवाश्मों से यह पता लगता है कि पृथ्वी पर पाई जाने वाली जीवित जीवों की पहली बस्ती सायनोबैक्टीरिया की ही थी। मुख्यतः स्ट्रोमैटोलाइट चूने के पत्थरों का पर्तदार जमाव है, जिसका निर्माण सायनोबैक्टीरिया की पर्त के एक के ऊपर एक जमने से हुआ है। यह पर्त पतली, हल्की और जटिल कुकुरमुत्ताकार यानी अर्द्धगोलाकार आकार की चट्टानों पर पायी जाती थी।

सायनोबैक्टीरिया की पर्त के ऊपर पर्त की वृद्धि से मुख्य रूप से चूने के पत्थर रखने वाली शैवाल निक्षेपाश्म बनी।

भूमि पर पहला पौधा

धरती पर पहले पौधे और फफूंद के प्रकट होने के जीवाश्म प्रमाण करीब 43.5 करोड़ वर्ष पूर्व के हैं। इससे पहले केवल महासागरों, उथले सागरों और झीलों के जल में साधारण जलीय पौधे, अकशेरुकी एवं आरंभिक जबड़ाविहीन मछलियां जीवन के राज छिपाए थीं। फफूंद और शैवाल का मिलाजुला रूप लाइकेन यानी शैवाक धरती पर आने वाले पहले संभावित हरे पौधे रहे होंगे। अनेक स्थानों पर विभिन्न प्रकार से संपन्न होने वाली ऐसी घटनाओं ने आज दिखने वाले विश्व को संभव बनाया होगा। हम अपने अस्तित्व के लिए धरती के पौधों के आभारी हैं क्योंकि हमारे परवर्ती के रूप में इन्होंने वायुमंडल में ऑक्सीजन को मुक्त करने के साथ मृदा को बनाकर पोषक तत्वों को संरक्षित करने के अलावा अन्य जीवों को भोजन और आश्रय उपलब्ध कराया।

लेकिन जल से थल पर आना पौधों के लिये एक सरल प्रक्रिया नहीं थी। इसके लिए उन्हें थल पर पहले अपने को गुरुत्व के विरूद्ध पकड़ बनाए रख कर अपने को

सूखने से बचाए रखने का रास्ता खोजना था और इसके साथ ही ऐसी क्रियाविधि और बनावट को अपनाना था जिससे अपने विकास और जीवन के लिए उनमें पानी और अन्य रसायनों का संचरण होता रहे।

सर्वप्रथम इस समस्या से उभरने में छोटे द्रुमी (मॉस), लिवरवार्टस् (प्रहरिता) और होंगवार्टस् पौधे समर्थ हुए जिन्हें संयुक्त रूप से ब्रायोफाइट कहा जाता है जो

छोटे आरंभिक पौधे।

अंटार्कटिका को छोड़कर अन्य सभी महाद्वीपों में पाए जाने वाले बीजरहित हरे पौधे हैं। बहुत छोटे होने के कारण यह धरती के बहुत समीप रह कर पानी और पोषक तत्वों को सीधे कोशिकाओं से अवशोषित कर सकते थे। राइजोईड्स कहलाने वाले धागे सी व्यवस्था जो पौधों को मिट्टी से जकड़े रखती थी, वे आधुनिक जड़ों की आरंभिक प्राकृतिक व्यवस्था थी।

पौधों में जड़ व्यवस्था और शिराओं के विकास के बाद से पौधों में पानी और पोषक तत्वों का संचरण आसान हो गया और वे बहुत बडे होने लगे। विशाल फर्न-पेड़

के पत्ते सूर्य की तरफ फैलने लगे तो हार्स टेल तथा क्लब मांस जैसे पौधों ने बीजाणु पैदा करने की क्षमता विकसित कर ली। धरती की सतह पर नाटकीय ढंग से परिवर्तन करने वाले यह नए प्रकार के पौधे टेरिडोफाइट कहलाए।

फर्न (पर्णांग) ने पृथ्वी की स्थलाकृति को नाटकीय ढंग से बदल दिया।

ब्रायोफाइटा और टेरिडोफाइटा धरती पर तो विकिसित हो गए लेकिन पुनरुत्पादन के लिए वह पानी की एक पतली फिल्म पर ही निर्भर रहते थे। अंडाणु और अंडों के साथ अपने प्रजनन के लिए स्वयं ही जल और भोजन की आपूर्ति करने वाले पौधों का विकास कुछ लाख वर्षों के बाद ही संभव हो पाया। बीज वाले पौधे, फूलों और घास के पौधों ने एक नया तरीका अपना लिया। उनका शुक्राणु परागण में ही उपस्थित होता

था जो हवा व पानी द्वारा दूर-दूर जा कर अपनी वृद्धि कर सकता था।बहुत समान इनमें शुक्राणु पराग के विशिष्ट रूप में विकसित हुए जिससे ये हवा द्वारा बहुत दूर तक पुनर्उत्पादन कर सकते थे।

प्राथमिक उत्पादक

पौधे प्रकृति चक्र में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह पृथ्वी पर उपस्थित जीवन के अन्य सभी रूपों के लिए प्राथमिक उत्पादक का दायित्व निभाते हैं। इसका कारण यह है कि सजीवों में केवल पौधे ही अपना भोजन स्वयं बना सकते हैं। मानव सहित सभी जानवर अपने भोजन के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पौधों पर ही निर्भर हैं। पौधों के प्राथमिक उत्पादक होने के कारण सभी जीवों द्वारा प्राप्त किये गये भोजन का संबंध हमेशा पौधों से ही जोड़ा जा सकता है।

कैलिफोर्निया का सिकोया वृक्ष 88 मीटर लंबा और 9 मीटर चौड़ा है।

पौधे हमारे द्वारा ली गई सांसों में शामिल ऑक्सीजन के भी स्रोत होते हैं। पौधे सूर्य से ऊर्जा, वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड और मिट्टी से पानी एवं खनिज तत्वों को लेकर प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा अपना भोजन बनाते हैं। इस प्रक्रिया में वह पानी और ऑक्सीजन मुक्त करते हैं। जानवर और अन्य जीव इस ऑक्सीजन को लेकर श्वसन क्रिया के दौरान कार्बन डाईआक्साइड छोड़ते हैं, जो इस चक्र को पूर्ण करती है। प्रकाश संश्लेषण और श्वसन का यह प्राकृतिक चक्र पृथ्वी पर ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड और जल का प्राकृतिक संतुलन बनाए रखता है।

विविध रूप

करीब 3.6 अरब वर्ष पहले चारों ओर अनेक आकार और स्वरूपों के विभिन्न प्रजातियों के पौधे पाए जाते थे। आज वनस्पति जगत में 2,50,000 प्रजातियों के पौधे हैं जिनमें धरती के सभी शैवाल, फर्न, शंकुवृक्ष, फूलदार पौधे और अनेक प्रकार के पौधे शामिल हैं। कुछ पौधे बहुत छोटे हैं जिन्हें हम नग्न आंखों से देख नहीं सकते तो कुछ पौधे गगनचुम्बी भवनों के बराबर भी होते हैं। अमेरिका में स्थित सिकोया वृक्ष धरती का सबसे ऊंचा वृक्ष है, जो 88 मीटर ऊंचा और 9 मीटर चौड़ा है।

करीब 14.5 करोड़ वर्ष पहले आवृतबीजी पहला फूलदार पौधा प्रकट हुआ था।

आरंभिक हरे पौधे जैसे शैवाल और फर्न अपनी वंश वृद्धि के लिए बीज तैयार नहीं करते थे। आरंभिक बीज वाले पौधे अनावृतबीजी (जिम्नोस्पर्म) बिना फूल वाले पौधे थे जिनमें बीज एक ओवरी (अण्डाशय) से ढका नहीं होता था। पहला फूलदार पौधा आवृतबीजी (एंजिओस्पर्म) कहलाया जो करीब 14.5 करोड़ वर्ष पहले प्रकट हुआ था। आज वनस्पति जगत में 90 प्रतिशत आवृतबीजी पौधे हैं। यद्यपि फूलदार पौधे जो जलीय आवास में रहते थे वे सूखी झील के तल और दलदलों की लवणीय

परिस्थितियों के अनुकूल तो हो गए परंतु फूल वाले पौधों की कोई प्रजाति महासागरों में नहीं पाई जाती।

ऑक्सीजन और भोजन के स्रोत के अलावा पौधे पर्यावरण को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आज आप बिना पौधों के किसी स्थान की कल्पना नहीं कर सकते हैं। पृथ्वी पर बिना पौधों वाले स्थान केवल आर्कटिक क्षेत्र, उच्च पर्वत, शुष्क रेगिस्तान, एवं गहरे महासागर हैं। पौधे वर्षावन, टुंड्रा क्षेत्र एवं रेगिस्तान से लेकर महाद्वीपीय ढलानों पर सर्वत्र पाए जाते हैं। वास्तव में हम जब किसी विशिष्ट स्थलाकृति के बारे में सोचते हैं तो हमारे आखों के सामने सबसे पहले पौधों का दृश्य ही उभरता है। क्या आप बिना पेड़ों के जंगलों की या बिना घास के 'प्रेअरी' के चित्र बनाने की कल्पना करने का प्रयत्न कर सकते है। वह पौधे ही हैं जिन्होंने पृथ्वी पर वातावरण का निर्माण कर इसे सुव्यवस्थित बना रखा है।

मृदा में जड़

जमीन पर उगने वाले पौधों का अस्तित्व उस पतली पर्त के बिना नहीं हो सकता जिसे हम मृदा या मिट्टी कहते हैं। यह पौधों को यांत्रिक आधार और आश्रय प्रदान करने के साथ वृद्धि के लिए आवश्यक खनिज तत्व भी प्रदान करती हैं। पौधों की जड़ें मिट्टी द्वारा जकड़े रहने वाले पानी और हवा का उपयोग करती हैं।

मिट्टी चट्टानों के टूटे कणों और कार्बनिक उत्पादों से बनती है। मिट्टी अक्रिय और अपरिवर्तित घटक नहीं है, यह भौतिक और रासायनिक क्रियाओं और सजीवों की प्रक्रियाओं द्वारा लगातार बदलती रहती है। जब पौधे मरते हैं तब वह क्षय होकर मिट्टी में मिल जाते हैं। यह प्रक्रिया मिट्टी को पोषक तत्वों से समृद्ध बनाती है।

मिट्टी जमीन के पौधों को आधार प्रदान करती है तो पौधे भी मिट्टी को जकड़े रखकर उसे हवा और पानी द्वारा होने वाले क्षरण से बचा कर मृदा संरक्षण में सहायक होते हैं। इस प्रकार यदि वनस्पति आच्छादित क्षेत्र कम होता है जैसा कि वनों की अंधाधुंध कटाई और चारागाहों में अधिक चराई से होता है तो हवा और जल से मिट्टी

अपरदित होगी। तब यह अपरदित मिट्टी नदियों, झीलों और जलाशयों में जमा होगी। जब रेगिस्तानों से सटे क्षेत्रों में वनस्पतियों का समाप्त कर दिया जाता है। तब वह क्षेत्र रेगिस्तान में परिवर्तित होने लगता है। आज विश्व के अनेक भागों में कृषि को मृदा क्षरण और रेगिस्तानीकरण जैसी पारिस्थितिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

पौधे, जीवों की हजारों अन्य प्रजातियों के प्राथमिक आवास स्थल हैं। अनेक जीव पौधों के ऊपर, नीचे और उनके अन्दर रहते हैं। पौधे जीवों को आश्रय और सुरक्षा प्रदान करते हैं। पौधे जीवों को भोजन की खोज के लिए भी स्थान प्रदान करते हैं। आवास के रूप में पौधे जलवायु को बदलते रहते हैं। छोटे स्तर पर पौधे जीवों को तापमान और हवा से बचाकर उन्हें छाया प्रदान करते हैं। वृहद स्तर पर वर्षा वन जैसे क्षेत्रों में पौधे पृथ्वी की सतह के विशाल भाग की वायुमंडलीय आर्द्रता को परिवर्तित करके वर्षा के पैटर्न को बदल सकते हैं।

हमारे जीवन में पौधे

पौधे हमारे जीवन का एक हिस्सा बन गये हैं। पौधे न केवल भोजन और आवास बल्कि हमारे द्वारा उपयोग की जाने वाली अनेक वस्तुओं जैसे भोजन, रेशे और औषधियों आदि के स्रोत हैं। पौधे हमारी आवश्यकता की कुछ ऊर्जा की आपूर्ति भी करते हैं। भारत सहित विश्व के अधिकतर भागों में गरीब लोगों के लिए अपना भोजन बनाने और ऊष्मा के प्रथामिक स्रोत के रूप में लकड़ी महत्वपूर्ण संसाधन है। आज हमारे द्वारा उपयोग किए जाने वाले ऊर्जा के अन्य स्रोत जैसे कोयला, प्राकृतिक गैस और गैसोलिन भी लाखों वर्ष पूर्व के जीवित पौधों के ही अवशेष हैं। बिना पौधे और उनके उत्पादों के हम जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। यदि हम भोजन और अन्य स्रोतों के लिए भी अन्य वैकल्पिक स्रोत खोज लें और पृथ्वी से सभी पौधे समाप्त हो जाएं तब हम 11 वर्षों में ही ऑक्सीजन की कमी से दम घुटने के कारण जीवित नहीं रह पाएंगे।

विश्व के अनेक भागों में तीव्र गति से हो रहा वनों का विनाश पर्यावरण के लिए गंभीर खतरा है। खतरा केवल इसलिए नहीं हैं कि वनों के उत्पाद में ऑक्सीजन प्रमुख

है। सदियों से हरे पौधे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड का उपयोग करने के अलावा वे कार्बन डाइऑक्साइड गैस को सोखने के कुण्ड का भी काम करते हैं। वनों के कटने के कारण पौधों के कम होने से पर्याप्त मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड नहीं सोखी जाने के अलावा वायुमंडल में लकड़ी के जलने से उत्पन्न कार्बन डाइऑक्साइड का शामिल होना भी चिंता का विषय है। वैश्विक स्तर पर तीव्र गति से औद्योगिकीकरण होने के परिणामस्वरूप वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा खतरनाक स्तर तक पहुंच गई है। वनों की अव्यवस्थित कटाई की भयावहकता को ओर बढ़ा रही है।

एक अकेला वृक्ष अपने जीवनकाल के दौरान 1,000 किलोग्राम से अधिक कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करता है। इसलिए वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा को घटाने के लिए वृक्षारोपण करना सस्ता और आसान रास्ता होगा। सौभाग्य से हमारे देश में बारिश के मौसम के दौरान वन महोत्सव (वनों का त्यौहार) के आयोजन के समय वृक्षारोपण की लंबी परंपरा रही है। हालांकि पिछले कुछ दशकों में अनेक कारणों से लाखों हैक्टेयर जंगल कम हुए हैं, लेकिन अब इस नुकसान की भरपाई का समय आ गया है। भारत सरकार ने हाल ही में 'ग्रीन इण्डिया' नामक देशव्यापी अभियान के द्वारा देशभर में वृक्षारोपण कार्यक्रम की शुरूआत की है, जो स्वागत योग्य कदम है।

8

मानवीय हस्तक्षेप

समय-समय पर जीवाश्मों की खोज की अनेक रिपोर्टें आती रहती हैं जिनमें यह कहा जाता है कि ये ही आधुनिक मानव के पूर्वजों के जीवाश्म हैं। इनमें केन्या से दो नाम 'प्रोकोन्सुल' और 'केन्यापिथिकस', दो नाम भारत, पाकिस्तान और चीन के विभिन्न स्थलों से रामापिथिकस और शिवापिथिकस, एवं दो नाम यूरोप के ड्रायोपिथिकस और रूडोपिथिकस हैं। यह कपि समान जीव करीब 0.8 करोड़ से लेकर 2 करोड़ वर्ष पहले तक पाया जाता था। उपरोक्त में से एक भारत के शिवालिक चोटी पर पाए गये ऊपरी जबड़े का जीवाश्म वर्तमान मानव के सबसे प्राचीन पूर्वज रामापिथिकस (इसका नामकरण रामायण महाकाव्य के निर्वासित राजकुमार राम के नाम पर किया गया है) का माना गया है। लेकिन उसने पूरे वैज्ञानिक जगत में सनसनी फैला दी थी। सन् 1970 के मध्य में जब

वर्तमान मानव का प्रत्यक्ष रूप से सबसे प्राचीन पूर्वज रामापिथिकस है।

ऑस्ट्रालोपिथिकस अफारेंसिस के जीवाश्मों की खोज से यह पता लगा कि मानव की उत्पत्ति एशिया से नहीं अफ्रीका से हुई है तब से रामापिथिकस के पक्ष में समर्थन कम हो गया। जल्द ही यह बात साफ हो गई कि रामापिथिकस के मानवीय गुणों की परिकल्पना किसी स्पष्ट जीवाश्म प्रमाण पर आधारित नहीं थी। अन्त में यह विचार मान्य हुआ कि रामापिथिकस केवल कपि था, जो ऑरेन्गोटन समूह से संबंधित था।

वर्तमान में जैसा हम जानते हैं कि हम जिन कपि जैसे जीवों के वंशज होने की बात स्वीकार करते हैं, वह तो बहुत बाद में करीब 30 लाख वर्ष पूर्व विकसित हुए थे। जलवायु में हुए महापरिवर्तन के बाद इस समय हमारे पूर्वज पेड़ों से उतर कर मैदानी भागों में फैलने लगे थे। वास्तव में तब उनके लिए जीवन और मरण का प्रश्न था और कपियों में वे जिन्होंने बदलते पर्यावरण में अपने को ढाल लिया, वे विजयी हुआ था। मैदानों में बसने वाले ये शायद उन कपियों के उत्तराधिकारी ही थे जिन्हें आज हम अपना पूर्वज मानते हैं।

करीब 50 से 60 लाख वर्ष पूर्व एक विध्वंसक पर्यावरणीय बदलाव से तापमान कम होने लगा और आरंभिक कपियों सहित जंगलों में बसने वाले अनेक जीव समाप्त होने लगे। जलवायु में हुए परिवर्तन से उनके सामने एक नई स्थिति पैदा हो गई। इस बदले हालात में जंगल तेजी से समाप्त होने लगे जो उनके रहने का स्थान थे। इससे वृक्षों पर रहने वाले कपियों के लिए संकट उत्पन्न हो गया और वह पेड़ों से जमीन पर उतर आए और आज के आधुनिक मानव की तरह दो पैरों पर चलते हुए मानवता की ओर बढ़ने लगे।

गहरे सागरीय अभ्यन्तर, धरती में जमे हुए जीवाश्मों और अन्य भूगर्भिय अभिलेखों से इस बात के प्रमाण मिले हैं कि वैश्विक ठंडक से वृहद स्तर पर जंगल नष्ट हुए। एक परिदृश्य के अनुसार तापमान में व्यापक परिवर्तन से (जो अनेक लोगों द्वारा 11 डिग्री सेल्सियस माना जाता है) के अनुसार अंटर्कटिका पर तीव्र गति से बर्फ जमनी आरंभ हुई। इस प्रकार बहुत अधिक मात्रा में पानी के बर्फ की चादरों में कैद हो जाने पर समुद्र का जल स्तर करीब 50 से 60 मीटर कम हो गया। इसी समय जलवायु भी अत्यंत शुष्क हो गई, जिससे वर्षा ने अनेक स्थानों विशेषकर

उष्णकटिबंधीय अफ्रीका के क्षेत्र को प्रभावित किया, फिर वहां जंगल घास के खुले मैदानों में बदल गए। जैसे ही जंगल लुप्त होने लगे वैसे ही आरंभिक कपियों के आवास खत्म होने से उनकी उनकी संख्या कम होने लगी थी।

जब आरंभिक कपियों ने धरती पर जीवन यापन के लिए प्रयास करते हुए अपने का नये वातावरण में अपने को ढालना आरंभ किया तब इस दौरान उनमें मानवीय संरचना वाले गुण जैसे चपटा चेहरा, अधिक समतल दांत और मस्तिष्क का आकार अधिक होना आदि बदलाव उभरने लगे। वह खड़े होकर चलने लगे और उनके हाथ लगने वाली लगभग हर वस्तु को खाने लगे। इसी के साथ ही उन्होंने आपस में भोजन को बांट कर खाने की कला भी सीख ली जो मनुष्य स्वभाव की एक मुख्य विशेषता है।

दो पैरों पर चलने वाले मानव के आरंभिक पूर्वज ऑस्ट्रालोपिथिकस अफारेंसिस का वैज्ञानिक रूप से पुर्ननिर्मित चेहरा ।

कपियों द्वारा चलना

उन वैज्ञानिकों के लिए जो मानव जाति के उद्गम की खोज कर रहे थे, एक वयस्क मादा के जीवाश्म जिसे लूसी नाम दिया गया है (वैज्ञानिक नाम ऑस्ट्रालोपिथिकस अफारेंसिस)। कई मायनों में यह एक उल्लेखनीय खोज थी। उस समय तक यह ज्ञात आधुनिक मानव की सबसे प्राचीन और पूर्ण पूर्वज थी। उसके कूल्हे प्रदेश और जांघ की हड्डियो के मिलने से इस बात में कोई सन्देह नहीं रह गया है की वह सीधी खड़ी होकर चलती थी। अन्य उल्लेखनीय गुणों

में लूसी के पैरों के अंगूठे का अन्य उंगलियों के साथ सुयोजन था जो कि आधुनिक मानव के पैरों का गुण है। इसके अलावा ऑस्ट्रालोपिथिकस अफारेंसिस के अनेक जीवाश्म और भी मिले हैं।

ऑस्ट्रालोपिथिकस अफारेंसिस के दो पैरों पर चलने में समर्थ होना आधुनिक मानव के विकास की दिशा में बढ़ाया गया पहला कदम था। अब यह माना जाता है कि उसके बाद ही करीब 1,00,000 वर्ष पहले मस्तिष्क का आकार बढ़ने से मानव प्रजाति आज की इस स्थिति में पहुंची है। यह तब संभव हुआ जब मस्तिष्क अधिक सामर्थ्यवान हुआ और उपकरण बनाने जैसे जटिल कार्यों के लिए भी उसके हाथ स्वतंत्र हो गए।

दो पैरों पर खड़ें होने व चलने की क्षमता ने मैदानी जीवों को कई गुण प्रदान किए थे। उदाहरण के लिए वह अपने आसपास के क्षेत्र को अच्छी तरह से देख सकते थे और परभक्षियों को अग्रिम चेतावनी भी दे सकते थे। इससे उन्हें भोजन को खोजने में आसानी होती थी। इसके अतिरिक्त स्वतन्त्र हाथों से उनके द्वारा भोजन एकत्र करने और भोजन को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के साथ अपने परिवार और समूहों के साथ खाना बांटने में सुविधा होती थी। बाद में इनके लिए उपकरण और हथियार बनाना भी संभव हुआ जिसका उन्हें बहुत लाभ मिला। यह करीब 40 लाख वर्ष पूर्व हुआ था, जब आरंभिक पूर्वज पेड़ों के जंगली जीवन से जमीन पर उतर आए थे और पर्यावरण में हुई उथल-पुथल के कारण उन्होंने जमीन पर एक-दूसरी तरह का जीवन जीना आरंभ कर दिया था।

करीब 24 लाख वर्ष पूर्व से लेकर आज के समय के जीवाश्मों को 'होमो वंश' में रखा गया है। 'होमो हैबिलिस' के अवशेषों को मानव परिवार का पहला वास्तविक सदस्य माना गया है, जिसे अफ्रीका महाद्वीप के केन्या स्थित ऑलडुवई जार्ज स्थान पर सन् 1963 में खोजा गया था। ये 18 लाख वर्ष पुराने कंकाल नए वंश से संबंध रखते हैं जो कपियो से अधिक मानव के उपकरण बनाने वाले सबसे पहले पूर्वज थे। लगभग 15 लाख वर्ष पूर्व होमो हैबिलिस के खत्म होने के समय आधुनिक मानव के अधिक

विकसित पूर्वज प्रकट हुए। जिन्हें 'होमो एरेक्टस' या सीधा खड़ा होने वाला आदमी कहा गया। बड़े मस्तिष्क वाला हमारा यह पूर्वज सच्चे अर्थों में घुमक्कड़ था। यह पहले आरंभिक मानव थे, जो अफ्रीका महाद्वीप से निकल कर पूरे विश्व में फैल गए।

निएंडरथल मानव

करीब 4,00,000 से 2,00,000 वर्ष पूर्व होमो एरेक्टस में उल्लेखनीय परिवर्तन होना आरंभ हुआ था। करीब 2,50,000 वर्ष पूर्व तक जब आरंभिक होमो

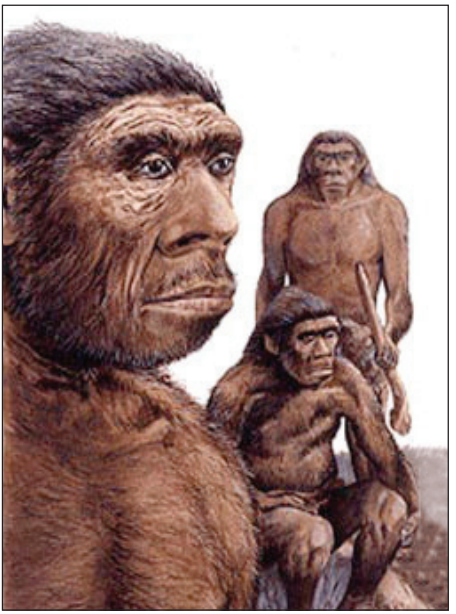

सभी सूक्ष्म शारीरिक संरचना में निएंडरथल मानव वर्तमान मानव जैसा दिखाई देता था।

सैपियन्स प्रकट हुआ तब तक उनमें मस्तिष्क का आकार अधिक बड़ा होने के साथ खोपड़ी की हड्डी पतली होने लगी थी। वे शारीरिक संरचनाओं के कुछ नगन्य अंतर गुणों के अलावा आधुनिक मानव जैसे लगने लगे थे और जिन्हें होमोसेपियन्स निएंडरथेंलिस् या निएंडरथल मानव कहा गया। एक लाख बीस

हजार वर्ष 1,20,000 वर्ष पूर्व होमो सेपियन्स या आधुनिक मानव प्रकट हुए। इस प्रकार 1,00,000 वर्ष पूर्व दो उपप्रजातियों का अस्तित्व रहा यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि ये एक के बाद एक विकसित हुई हों। पहला निएंडरथल करीब 2,50,000 वर्ष पूर्व अफ्रीका से निकला था। आधुनिक मानव इनके करीब 2,00,000 वर्षों बाद प्रकट हुआ।

निएंडरथल मानव आधुनिक मानव का सबसे नजदीकी संबंधी था। जब सन् 1856 में जर्मनी की निएंडर घाटी के डशेल्डोर्फ के समीप चूने पत्थर की गुफाओं में निएंडरथल का पहला कंकाल जीवाश्म मिला तब मानव के विकास से संबंधित आधुनिक मत स्वीकार नहीं किया गया था। तब तक वर्तमान मानव के कपि जैसे जीव से विकसित होने का विचार पूर्णतया जम नहीं पाया था। इसलिए जब चूने के पत्थर के उत्खनन के दौरान मानव कंकाल जैसा दिखाई देने वाला हिस्सा मिला तब किसी ने इस मानव कंकाल के वास्तविक महत्व को नहीं समझा था। जीवाश्मों के अभिलेखन से पता लगता है कि निएंडरथल मानव दूर उत्तर में ब्रिटेन तक और दक्षिण में यूरोप में स्पेन तथा बाद में पूर्व में मध्य एशिया और पश्चिम एशिया तक धूमा था। किंतु उनकी जनसंख्या किसी भी समय बहुत अधिक नहीं रही जो दस हजार से ज्यादा कभी नहीं रही।

अब व्यापक तौर पर यह स्वीकारा गया है कि वर्तमान मानव और निएंडरथल मानव दोनों अफ्रीका के होमो एरेक्टस से विकसित हुए हैं। वास्तव में वैज्ञानिकों द्वारा कोशिका के माइटोकॉन्ड्रिया में उपस्थित जीन पदार्थ यानी डी.एन.ए. के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला है कि पृथ्वी के प्रत्येक जीवित व्यक्ति का करीब 2,00,000 अफ्रीका में रहने वाली मादा से संबंध हो सकता है। यह निष्कर्ष इसलिए संभव हुआ है कि माँ से अपनी संतानों में माइटोकॉन्ड्रिया में उपस्थित डी.एन.ए. बिना किसी बदलाव के अपनी संतानों को प्रदान कर दिया जाता है। जबकि कोशिका के केन्द्रक में पाये जाने वाले किसी सन्तान के डी.एन.ए. दोनों माता-पिता से प्राप्त होते हैं। डी.एन.ए. प्राकृतिक उत्परिवर्तन से परिवर्तित नहीं होते और अगर कुछ बदलाव होता भी है तो उसकी दर लगभग एक जैसी ही होती है। विभिन्न जनसंख्या में माइटोकॉन्ड्रिया

डी.एन.ए. में आये परिवर्तन के तुलनात्मक अध्ययन से जनसंख्या द्वारा अपने उद्भव से बिताई गई समयावधि का सम्भावित मान पता लगाया जा सकता है। इस प्रकार हम सभी करीब 2,00,000 वर्ष पूर्व जीवित रहने वाली अफ्रीका माता 'ईव' के वंशज हैं।

करीब 3,50,000 वर्ष पूर्व यूरोप में बसने वाली पहली मानव प्रजाति क्रो-मैगनन थी। हमारे यह पूर्वज उपकरण बनाने और शिकार की तकनीकों के साथ अन्य अतिरिक्त कलाओं में निएंडरथल से अधिक पारंगत थे। लेकिन उनकी उत्पत्ति करीब 1,00,00 वर्ष पूर्व अफ्रीका में हुई थी। इस तथ्य का पता दक्षिण अफ्रीका की एक गुफा में करीब 1,10,000 वर्ष पूर्व की मानव की खोपड़ी के मिलने से हुआ है।

यूरोप और दक्षिण पूर्व एशिया में फैलने के बाद, आधुनिक मानव की आबादी नए महाद्वीपों, उत्तर में उत्तरी-अमेरिका और दक्षिण में आस्ट्रेलिया में पहुंची। इन दो महाद्वीपों में अनेक स्थानों से मिलने वाले पत्थर के उपकरणों से यह पता चलता है कि हमारे पूर्वज करीब 50,000 वर्ष दक्षिणपूर्व एशिया से खुले समुद्र में 100 किलोमीटर की लंबाई को पार कर आस्ट्रेलिया और न्यू गिनी में पहुंचे थे।

उत्तरी अमेरिका से प्रवास बहुत बाद में, करीब 15,000 वर्ष पूर्व हुआ और यह जमीन के रास्ते से ही हुआ था। हिमाच्छादन और समुद्री स्तर में गिरावट के बीते अभिलेखों से हम जानते हैं कि करीब 12,000 से 25,000 वर्ष पूर्व एशिया और उत्तर अमेरिका, बेरिनजिया (Beringia) कहलाने वाले एक विशाल भूखण्ड द्वारा आपस में जुड़े, वर्तमान में इस स्थान पर बीरिंग जलडमरू (Bering Strait) स्थित है। एशिया के कुछ शिकारियों के समूह और उनके परिवारों ने उत्तर अमेरिका पहुंच गये। जबकि इस दौरान मैमथ के झुण्डों ने मौसमी प्रवास आरंभ कर दिया था। लगभग 12,000 वर्ष पुर्व जब समुद्र स्तर पुनः बढ़ा तब कुछ अलास्का में रह गये और उन्होंने बचे हुए उत्तर व दक्षिण अमेरिका में बस्तियां बसा लीं।

पहली फसल

उस समय का सही-सही अनुमान लगाना कठिन है कि आधुनिक मानवों के पूर्वजों का आगमन कब हुआ। एक मत के अनुसार क्रो-मैगनन के करीब 40,000 वर्ष पुराने

कंकाल को वर्तमान मानवों का पहला कंकाल माना गया है। इस संबंध में यह कहा जाता है कि आरंभिक आधुनिक मानव का सही स्वरूप कृषि के विकसित होने पर ही आया। यह इसलिए भी माना जाता है कि इस समय मानव ने केवल केवल चारा इकट्ठा करने एवं शिकारी वाला खानाबदोशों जैसा जीवन छोड़ दिया था। उसके स्थायी जीवन की ओर बढ़ने से संस्कृति भी फली-फूली थी। उनमें वैज्ञानिकों, कवियों, उपन्यासकारों, अन्वेषकों और कलाकारों के गुण उभरने लगे थे। यह परिवर्तन हमारे पूर्वजों द्वारा स्थायी जीवन को अपनाने पर हुआ जिससे सभ्यताओं के विकसित होने से पृथ्वी का दृश्य सदा के लिए बदल गया।

बीस हजार वर्ष पूर्व पूरे विश्व के लगभग सभी कोनों में पहुंचने वाले हमारे पूर्वज शिकार पर निर्भर रहते थे, वह भोजन के लिए मुख्यतया जंगली जानवरों और जंगली फलों एवं कंदों पर निर्भर थे। हजारों वर्षों के बीत जाने पर मानव की समझ बढ़ने के साथ इस दौरान सामाजिक और सांस्कृतिक ताने-बाने की रूपरेखा के विकसित होने को महत्वपूर्ण घटना माना जा सकता है। करीब 10,000 वर्ष पहले हम विश्व का रूप परिवर्तन करने वाली क्रांति की दहलीज पर खड़े थे।

लगभग 12,000 वर्ष पहले के अन्तिम हिम युग के बाद सभी महाद्वीपों से हिम का आवरण कम होने लगा था। तब उत्तरी यूरोप के बहुत से भाग को ढ़के हिम-छत्रक पीछे हटने लगे थे। उस समय जलवायु स्वास्थ्यकर होने लगी थी। यही समय था जब हमारे पूर्वजों में नई योग्यताएं विकसित हो रही थी। उन्होंने पाया कि जंगली कंद-मूलों, फल जंगली जीवों के न होने पर भी वे भोजन के लिए अनाज उगा सकते हैं। कृषि की शुरूआत ने मानव के भविष्य पर गहरी छाप छोड़ी।

और जनसंख्या बढ़ने लगी

कृषि के आरंभ से अधिक भोजन उत्पन्न करने के साथ अधिक लोगों को भोजन खिलाना भी संभव हो गया था। इसमें आश्चर्य नहीं कि पर्याप्त भोजन की आपूर्ति से विश्व की जनसंख्या तेजी से बढ़ने लगी थी। ईसा के दस हजार वर्ष पूर्व में जहां जनसंख्या दस लाख थी वहीं ईसा के दो हजार वर्ष पूर्व में जनसंख्या बढ़कर दो करोड़

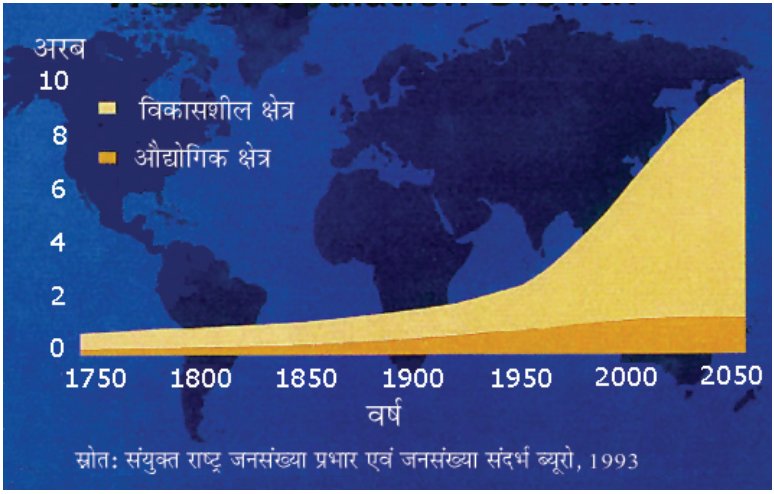

सन् 2050 तक विश्व की जनसंख्या करीब 12 अरब से अधिक हो जाएगी।

सत्तर लाख हो गई थी। ईसा के एक हजार वर्ष बाद में मानवीय जनसंख्या पच्चीस करोड़ चालीस लाख हो गई थी और वर्ष 2000 में विश्व की जनसंख्या 6 अरब का आंकड़ा पार कर गई। वर्ष 2050 तक जनसंख्या के दुगुना होने की सम्भावना है।

बढ़ती जनसंख्या के लिए भोजन, आवास और ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जंगलों का विशाल इलाका निरावृत किया गया। अनाज उगाने के लिए भी जंगलों को साफ किया जाने लगा। जानवरों द्वारा अत्यधिक चराई से भूमि का बहुत अधिक हिस्सा बंजर भूमि में बदलने लगा। बिना नियंत्रण के पृथ्वी का वातावरण विकृत होने लगा था। 18 वीं सदी के दौरान हुई औद्योगिक क्रांति से वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड जैसी हरित-गृह गैसों की मात्रा बढ़ने लगी।

पृथ्वी के जैवमंडल पर प्रभाव

पिछले सौ वर्षों के दौरान मानवीय जनसंख्या वृद्धि और उससे जुड़ी अन्य गतिविधियों ने पृथ्वी पर, विशेष रूप से जैवमंडल पर, नकारात्मक प्रभाव डाला है। हालांकि पृथ्वी पर स्तनधारियों की 4500 प्रजातियों में पाई जाने वाली केवल एक प्रजाति है और पृथ्वी के जटिल जैव मंडल का निर्माण करने वाली 3 से 10 करोड़ प्रजातियों में से केवल

एक है। मानव अपने भोजन, ऑक्सीजन और जीवन की अन्य आवश्यकताओं के लिए पूर्णतः जैवमंडल पर ही निर्भर है।

हमारे ग्रह पर रहने वाली सभी प्रजातियों में मानव अद्वितीय है क्योंकि यह तार्किक सोच रखने के साथ संप्रेषण के लिए लिखने और बोलने की अद्‌भुत क्षमता रखता है। इस क्षमता ने मानव को उसके पर्यावरण में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने के योग्य बनाया है। प्रौद्योगिकीय और सांस्कृतिक नवाचार के साथ बढ़ती जनसंख्या ने आज कई प्राकृतिक सीमाओं को भी पार कर लिया है। आज मानवीय जनसंख्या के लगातार बढ़ने के परिणामस्वरूप जीवन के अन्य रूपों के लिए पर्यावरण में बहुत ही कम स्थान रह गया है। ऐसा कहा गया है कि इक्कीसवीं सदी पृथ्वी के जैवमंडल की नियति के निर्धारण का केंद्रीय समय होगा। मानव द्वारा स्थलमंडल को पहुंचाए गये नुकसान की भरपाई समय के साथ धीरे-धीरे हो सकती है लेकिन मानव द्वारा जैवमंडल को पहुंचाए गये नुकसान की पूर्ति आसानी से नहीं हो सकती। यह अनेक प्रजातियों के लिए दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति होगी जिसमें कुछ प्रजातियां पहले ही विलुप्त होने की कगार पर होंगी। इनमें से कुछ प्रजातियां विलुप्त होने की कगार पर हैं। क्या मानव नये प्राकृतिक ज्ञान से व मानव इतिहास से सबक लेकर पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र की बिगड़ती हालत को तथा प्रजातियों के विलुप्तीकरण को रोक पाएगा? इन सभी प्रश्नों का उत्तर तो केवल आने वाला समय ही बता पाएगा।

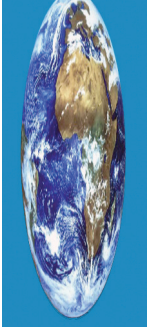

9

पृथ्वी पर जीवन की कालावधि

कैम्ब्रियन पूर्व कल्प (प्री कैम्ब्रियन पीरियड) (57 करोड़ से 4.5 अरब वर्ष पूर्व तक)

इस कल्प में महाद्वीपों, वायुमंडल और महासागरों का निर्माण हुआ। इसी कल्प में पहली बार बैक्टीरिया और सायनोप्रोकोयोटेस नामक एककोशिय जीव के पूर्वज प्रोकोयोटेस का विकास हुआ। इस कल्प में वायुमंडलीय ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ने लगी। यूकैरियोट नामक जीवों में नाभिकीय केन्द्रक और नाभिकीय झिल्ली प्रकट हुई। सरल जीव व पौधे जैसे फफूंद, बैक्टीरिया, जैलीफिश, कशाभी, अमीबा, वार्मस और स्पंज जैसे अकशेरुकी प्राणियों का विकास इस दौरान हुआ।

पुराजीवी महाकल्प (पैलिजोइक इरॉ) (25 करोड़ से 57 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

कैम्ब्रियन कल्प (50 करोड़ से 57 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस समयावधि में बहुकोशिय जीवन फला-फूला। पहले ट्राइलोबाइस, ब्राकिओपोडस, नॉटिलोईडस (चक्रीय शैल वाला मोलास्क), सीपियों, घोंघों, पपर्टदार (Crustaceans), गेस्ट्रोपोड, प्रवालों और प्रोटोजोआन प्राणियों का विकास इसी कल्प में हुआ था।

ऑडोविशियन कल्प (43.8 करोड़ से 50 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस कल्प में धरती पर आरंभिक प्राचीन जीवन प्रकट हुआ। महासागरों में कशेरुकी प्राणियों का विकास इसी दौरान हुआ। पहली स्टारफिश, सी आर्चिन, ग्रायोजोआ, बिना जबड़ों वाली मछलियां, शूलाभ, इसी दौरान प्रकट हुए थे।

सिलूरियन कल्प (40.8 करोड़ से 43.8 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इसी समयावधि में धरती पर आरंभिक पेड़-पौधे और कीटों का उद्भव हुआ। फर्न, शार्क, बोनीफिश, और बिच्छु इसी कल्प में प्रकट हुए थे।

डिवोनियन कल्प (36 करोड़ से 40.8 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

मकड़ियों, दीमकों, और उभयचरों का पआविर्भाव इसी कालावधि में हुआ था।

कार्बनिफेरस कल्प (28.6 करोड़ से 36 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

धरती पर पहले वास्तविक सरीसृप प्रकट हुए। सिनेप्सिड (बड़े और मजबूत मांसपेशियों से बने जबड़ों वाले सरीसृप जो स्तनपायी जैसे दिखते हैं) इस कल्प में प्रकट हुए थे। कोयला इसी दौरान बनने लगा था।

पर्मियन कल्प (25 करोड़ से 28.6 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

वृहद विनाश द्वारा प्रचुर संख्या में जीवन समाप्त हुआ। लगभग 90 प्रतिशत जीव समाप्त हो गए थे। इस दौरान मछली के समान पाल वाले सरीसृपों का आविर्भाव हुआ।

मध्यजीवी महाकल्प (मिसोजोइक इरॉ) (6.5 करोड़ से 25 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

ट्राइऐसिक कल्प (20.5 करोड़ से 25 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस दौरान साइकैड (उष्णकटिबंधीय वृक्ष जो ताड़ के पेड़ों जैसा होता है) प्रकट हुआ। इस समयावधि में छोटे डायनासोरों, इक्थिसोरसों और प्लीसिओसोरसों का आविर्भाव हुआ। आरंभिक कछुओं, छिपकलियों, और स्तनधारियों की उत्पत्ति इसी समयावधि में हुई।

जुरैसिक कल्प (13.8 करोड़ से 20.5 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस समयावधि में विशाल डायनासोरों, उड़ने वाले टेरोसौरासों और पहले स्किवड, मेंढकों एवं सैलामैन्डरों का आविर्भाव हुआ।

क्रिटेशियस कल्प (6.5 करोड़ से 13.8 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस कल्प में पृथ्वी पर डायनासोरों का वर्चस्व रहा। आरंभिक फूलदार पौधे, सर्प और वर्तमान मछलियां इस समयावधि में प्रकट हुई। क्षुदग्रह के प्रभावों और उनसे मलवा गिरने के परिणामस्वरूप इस धरती से डायनासोरों का खात्मा हुआ।

नूतनजीवी महाकल्प (सीनोजोइक इरॉ) (6.5 करोड़ वर्ष पूर्व से अब तक)

तृतीय कल्प (0.18 करोड़ से 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

पुराजल युग (पैलियोसीन ईपॉक) (5.55 करोड़ से 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व तक)
पृथ्वी पर स्तनधारियों का आविर्भाव हुआ। इस युग में आरंभिक स्तनपायियों में शिशुधानी मंडूक (मार्सुपिएल), कीटाशगण (इन्सेक्टीवोरास्), लीमरॉइडिया, क्रिओडान्टा (सभी कुत्ते व बिल्लियों जैसे मांसाहारियों के पूर्वज) और खुर वाले प्रारंभिक जीव पनपे थे।

आदिनूतन युग (इओसिन ईपॉक) (3.37 करोड़ से 5.55 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस समयावधि में घोड़ों, गेंडों, ऊंटों, और छिपकली जैसे कृंतक जीवों के पूर्वज यूरोप और उत्तरी अमेरिका में साथ-साथ प्रकट हुए। इसी समयावधि में स्तनधारी जीवों ने समुद्री जीवन को अपनाया।

अल्पनूतन युग (ऑलिगोसीन ईपॉक) (2.38 करोड़ से 3.37 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस युग में गैंडे स्तनपायी वर्ग के सबसे बड़े जीव थे। हाथियों, बिल्लियों, कुत्तों, बंदरों और महा कपियों ने जीवन की ओर पहला कदम इसी युग में रखा। इस युग में पहली बार घास प्रकट हुई।

मध्यनूतन युग (मायोसिन ईपॉक) (0.53 करोड़ से 2.38 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस समयावधि में वैश्विक जलवायु ठंडी होने लगी थी। इस युग में अंटार्कटिका पर बर्फ की परतें जमने लगी थी। रैकूनों और वीज़ल यानी कथियान्याल जीवों का इस युग में आविर्भाव हुआ। अफ्रीका और दक्षिणी यूरोप में विशाल कपियों का आविर्भाव हुआ। पहले होमिनिडस् (आरंभिक द्विपदी जो होमोसैपियन्स के अभी तक जीवित पूर्वज हैं) इसी दौरान प्रकट हुए थे।

आदिनूतन युग (प्लायोसीन ईपॉक) (0.18 करोड़ से 0.53 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

इस समयावधि में जलवायु बहुत ठंडी और शुष्क हो गई थी। स्तनधारी धरती पर प्रमुख जीव के रूप में उभरे, और उनके एक समूह का तीव्र विकास हुआ। यह आरंभिक समूह वर्तमान मानवों का पूर्वज था। पहले औस्ट्रालोपिथेसिन (मानव और कपियों दोनों से समानता रखने वाला दक्षिणी और पूर्वी अफ्रीका में रहने वाला आरंभिक होमेनिडस) इसी युग में प्रकट हुआ।

चतुर्थ कल्प (0.18 करोड़ वर्ष पूर्व से अब तक)

अत्यंतनूतन युग (8000 हजार वर्ष से 0.18 करोड़ वर्ष पूर्व तक)

पृथ्वी का पिछला हिमयुग इसी अवधि में आया था। इस दौरान धरती की सतह के एक चौथाई भाग पर ग्लेशियर फैल गए थे। वर्तमान मानव (निएंडरथल) का आविर्भाव और उनका फैलाव इसी युग में हुआ। पहले मैमथ और मैस्ट्रोडॉनस इसी समय धरती पर प्रकट हुए।

होलोसीन युग (8000 हजार वर्ष पूर्व से वर्तमान समय तक)

इस दौरान पहला आधुनिक मानव प्रकट हुआ।

संदर्भ

1 एक्सप्लोरिंग यूअर वर्ल्ड, नेशनल जिओग्राफिक्स सोसायटी (1989), ISBN 0-87088-726-2 पेज 608.

2. द लाईफ ऐण्ड डेथ ऑफ प्लेनेट अर्थ, डोनाल्ड ब्रोउनली ऐण्ड पीटर डी. वार्ड, टाईम्स बुकस् (2003), ISBN 978-0805067811, पेज 256.

3 द डायनेमिक अर्थ@नेशनल म्यूशियम ऑफ नेचरल हिस्ट्री (http://www.mnh.si.edu/earth).

4 द ओरिजिन ऐण्ड अर्लियर हिस्ट्री ऑफ द अर्थ, स्मिथसोनियन/नासा एड फीजिक्स अब्ट्रेक्स सर्विस (http://adsabs.harvard.edu/abs).

5 सोलर सिस्टम ओरिजिन ऐण्ड अर्थ फॉरमेशन (http://maritime.haifa.ac.il).

6 बिगनिंगसः ओरिजिन ऑफ अर्थ (http://www.biosbcc.net/ocean/marinesci/01intro/beorig.htm).

7 कॉस्मिक ओरिजिन ऑफ अर्थ मेटेरियल (http://servercc.oakton.edu/billtong/eas100/cosmicorigins.htm).

8 द एज ऑफ अर्थ, डार्लियम्पेल ऐण्ड जी. ब्रेंट, स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (1994). ISBN 978-0804723312, पेज 492.

9 वेरियस इश्यू ऑफ साइंटीफिक अमेरिकन, नेशनल जिओग्राफिक्स ऐण्ड डिस्कवर मेग्जिन.

अनुक्रमणिका

धूमकेतुओं, 9, 53
रूपांतरित भ्रंश, 34
यायावर जीवन, 78
यूकैरियोट, 56, 82
घासभूमियों, 36
खनिज संसाधन, 10
क्षरण, 1
क्षोभमंडल, 38
क्षुद्र ग्रह, 8, 53, 84
इमैन्यूल कैंट, 4
बहुकोशिय, 82
बाहरी क्रोड, 18
बाह्यमंडल, 39
ब्रायोफाइटा, 65, 66
एक-कोशीय जीव, 1, 63
कृत्रिम उपग्रह, 37
कायांतरित चट्टान, 44
कोशिकांग, 55
क्लोरोफ्लोरोकार्बन, 40, 41
मध्य-महासागरीय कटक, 51
मध्य-अटलांटिक कटक, 30, 31
मृदा संरक्षण, 69
महाद्वीपीय विसरण, 15, 24
महाद्वीपीय भूपटल, 14, 33
महासागरीय भूपटल, 14, 20, 21, 30, 33
महासागरीय अधस्थल, 33
मैमथ, 78
मैग्मा, 33
हिम युग, 79
हिमाच्छादन, 23, 78
हिमलव, 6
स्थितिज ऊर्जा, 6
सिनैप्सिडा, 56, 83
विद्युत् तूफान, 50
विलियम गिल्बर्ट, 18
विवर्तनिक गति, 53
निएंडरथल, 76, 78, 85
निहारिका परिकल्पना, 4
निरावेशन, 43
टिरेनोसोरस रेक्स, 58
हरित ग्रह प्रभाव, 3, 38
होमो हैबिलिस, 75
होमो एरेक्टस, 75, 77
हार्लोड सी. यूरी, 50
हैरोल्ड यूरी, 5
भ्रंश, 34
भूकंप, 10, 18, 29
भूमध्य रेखा, 11
भूपटल, 8, 12, 14, 15, 26
पक्षाभ, 38
पक्षाभकपासी, 38
पक्षाभस्तरी, 38
पराबैंगनी विकिरण, 38, 53
पुच्छल तारा, 9

पुनरुत्पादन, 66
पैंजिया, 20, 21
पेनस्परमिया सिद्धांत, 54
प्लेट विवर्तनिकी, 26, 35
प्रकाश संश्लेषण, 70
प्रावार, 12, 15, 16, 29
प्रोकैरियोट, 56
रामापिथिकस, 72, 73
रेडियोसक्रिय क्षय, 7
रेगिस्तान, 55
शैल-चक्र, 43
समुद्री द्रोणियों, 31
समतापमंडल, 38
स्थलमंडल, 13, 26, 33, 43
सक्रिय ज्वालामुखी, 33
सायनोबैक्टीरिया, 55, 63
सायनोप्रोकोयोटेस, 82
साइकैड, 83
सौर निहारीका, 7
सौरमंडल, 1, 7, 10, 12, 49
स्टेनली एल. मिलर, 50
सूत्रकणिका, 77
उष्णजलीय विवर, 50, 51, 52, 53
डी.एन.ए., 55, 77
डायनासोर, 57, 58, 60, 84
उच्चस्तरी बादल, 38
उत्तर ध्रुवीय ज्योति, 39
उत्तरी गोलार्ध, 2
उल्कापिण्ड, 38
दुर्बलतामंडल, 15, 26
वृक्षारोपण, 71
वायुमंडलीय आर्द्रता, 70
वाष्पोसर्जन, 41
क्रो मैगनन, 77, 78
क्रोमेटोग्राफी, 50
क्रोड, 18
वन महोत्सव, 71
चंद्रा विक्रमसिन्घ, 54
चुंबकीय क्षेत्र, 31
चुंबकीय दिक्सूचक, 19
चुंबकीय विसंगति, 33
तड़ित, 38
तापीय प्रदूषण, 43
तारकीय बादल, 7
तारकीय वायुमडंल, 5
जीवाश्म, 72, 73
जीवाश्म ईंधन, 39
ज्वारीय लहरें, 10
ज्वालामुखीय, 10, 14
ज्वालामुखीय गतिविधियां, 29
जैवमंडल, 80
जूल्स वर्न, 11
जल-चक्र, 41
जलमंडल, 13
नमभूमियों, 36
नीले-हरे शैवाल, 55
अंधःसागरीय गर्म उष्णोत्स, 50
अम्लीय वर्षा, 47, 60
अतिमहाद्वीप, 20, 21, 22
अग्नि वलय, 33
आयनमंडल, 39
आंतरिक क्रोड, 18
आवृतबीजी, 68
ओजोन, 38
आग्नेय (इग्नियस) चट्टानों, 46
अवरोहण क्षेत्र, 31
अवसादी चट्टानों, 44
टेथिस महासागर, 22
टेरिडोफाइटा, 66
टेरोसौरस, 57
अनावृतबीजी, 68
गुरुत्व बल, 6
ग्लोब, 13
फ्रेड हायल, 54